'संगीत मकरंद' में रागों का वर्गीकरण पुरुष राग, स्त्रीराग एवं नपुंसक राग में किया गया है।

रौद्रेऽद्भुते तथा वीरे पुंरागै, परिगीयते ।
श्रृंगारहास्यकरुणं स्त्रीरागैश्च प्रगीयते ।।
भयानके च बीभत्से शान्ते गायन्नपुंसके ।

रौद्र, अद्भुत तथा वीर रस पुरुष रागों में, श्रृंगार, हास्य एवं करुण स्त्री-रागों में भयानक, वीभत्स एवं शांत रस नपुंसक रागों में गाये जाते हैं।

पुरुष राग में बंगाल, सोम, श्री, भूपाली, छाया गौड, शुद्ध हिंडोल, आन्दोली, दोंबुली, गौड़, कर्णाट, फडमंजी, शुद्धनाटी, मालव-गौलक, रागरंग, छायानट, कोलाहल, सौराष्ट्री, वसंत, शुद्ध सारंग, भैरवी, रागध्वनि।

स्त्री-राग में तुंडी, तुरुष्कतुंडी, मल्लारी, मादुरी, पौरालिकी, काम्भारी, भल्लाती, सैंधवी, सालग, गंधारी, देवकी, देशिनी, बोलाबली, बहुली, गुणक्री, धुजेरी, वराटी, द्राविडी, हंसी,, गोडी, नारायणी, अहिरी, मेघरंजी, मिश्रनाट।

नपुंसक-राग में कौशिक, ललित, धनाश्री, कुरंजी, सौराष्ट्र, द्राविडी, शुद्ध, नागवराटी, कामोदकी, रामक्री, सावेरी, बडहंस, सामवेदी, शंकराभरण।

इस तरह से भाव और रस का एक दूसरे से निकट का संबंध दिखाई देता है।

राग नायकी	नैना लोभी भये लोचन लालची भये	आसक्ति वर्णन]
राग बिहागरा	प्यारी पग होले होले धरि. . .	शुक्लाभिसार
राग केदार	मानिनी मान निहारो	मान-वर्णन
राग सारंग	आज कहा संभ्रम है तुम्हारे धर तात-अद्भुत	
राग मालव	जै जै जै मोहन बलवीर अद्भुत रस गावत मुनि "कीर"	

हवेली संगीत के साहित्य में भी नायिका-भेद का वर्णन प्रचुर मात्रा में प्राप्त होता है। इन पदों में नायक केवल श्यामसुन्दर श्रीकृष्ण ही हैं। परात्पर परब्रह्म श्री कृष्ण एक होते हुए भी 'एकोऽहं बहुस्याम' इस श्रुति वाक्य के अनुसार अपने स्वरूप में नायक भेद के कई स्वरूप प्रकट करते हैं। इसलिए पदों में श्रीकृष्ण को 'बहुनायक' के नाम से संबोधित किया गया है। तानसेन एवं धौन्धी की रचनाओं में अपनी छाप के साथ बहुनायक का प्रयोग अधिकतर किया गया है–जैसे "तान के प्रभु तुम बहुनायक" एवं "धौन्धी के प्रभु तुम बहुनायक' इस प्रकार

की छाप प्रचुर पदों में देख सकते हैं । नायिका-भेद के अनेक प्रकार प्राप्त होते हैं। अष्टछाप कवियों में श्री गोविन्द-स्वामी रसेश पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीनाथजी के अष्टछाप कीर्तनकारों के प्रमुख अर्थात् इन कीर्तनकारों की गादी के मुखिया थे । अष्टछाप के संस्थापक गोस्वामी श्री विट्ठलेश्वर ने गोविन्दस्वामी को इस पद से सम्मानित किया था। आज भी कीर्तनकारों के मुखिया की गादी को गोन्विदस्वामी की गादी से संबोधित किया जाता है। यहां विस्तार भय से विवेचन अधिकतर केवल श्री गोविन्दस्वामी के पदों तक ही परिसीमित किया गया है।

अष्टछाप कविओं ने अपनी रचनायों में मुख्यतः रसराज शृंगार रस को ही दिखाया है, साथ में शान्त एवं करुणरस को भी अभिव्यक्त किया है। मान, स्वप्न, संयोग, उत्कण्ठा, खंडिता आदि के द्वारा विप्रलम्भ शृंगार की झलक दिखाई है। कई पदों में संयोग-शृंगार का भी अत्यन्त सुन्दर चित्रण किया है। इन भक्त कवियों ने इन पदों से जीव और ब्रह्म के महामिलनजन्य अचिन्त्य आनन्द की ओर संकेत किया है। "ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति" इस न्याय से इन पदों के प्रत्येक शब्द से सौन्दर्य ,भक्ति, रूप, लावण्य, अंगसौष्ठव इत्यादि का सुन्दर अर्थ प्रकट होता है। जैसे कि

"छाक ले चली प्राणपति पास.....
उत छवि निरखत सकुच ओट ह्वै
बलि बलि 'गोविन्ददास' ।।

इस पद में संयोग-शृंगार रस की सुन्दर अभिव्यक्ति दिवसाभिसारिका नायिका ब्रजसुन्दरी के रूप से की गई है। स्थायीभाव, आलंबन, उद्दीपन, संचारी- इन सभी भावों की अभिव्यक्ति भी है।

सुपनमें सगरी रैन गई....
'गोन्विद' प्रभु मिले सुख उपजे
जात न काहू कही ।।

इस पदमें विप्रलम्भ-शृंगार की अभिव्यक्ति है।

पिय बिन चन्द लग्यो दुःख देन....
'सूरदास' प्रभु तिहारे दरस बिन
विरहिन को नहिं चैन ।।
दिन दिन होत कंचुकी गाढ़ी....
गोविन्द प्रभु मिलिवे के कारण
निकसी करारे ठाढ़ी ।

इस पदमें 'मुग्धा' नायिका का वर्णन मिलता है।

गुजरिया ! गरब गहीली उतर नाहीं देत ।
गोन्विद प्रभु कहे सखनि सों
घेरो घेरो तब धाई अंचला धरियां ।

इस पद में रुपर्विता नायिका का वर्णन है ।

सांझ के सांचे बोल तिहारे....
कुंभनदास प्रभु गोवर्द्धनधर !
भले बचन प्रतिपारे ?

कुंभनदासजी के इस पद में खंडिता नायिका का वर्णन है जिसमें नायिका ने भगवान् के वचन प्रतिपालक स्वरुप की सुन्दर व्यन्जना की है !

तुमसों बोलवे की नाहिं
घर घर गवन करत गिरधर पिय
चित नाहिं एक ठांही....

× × ×

कृष्णदास प्रभु प्यारी के बचन सुन
हृदय मांझ मुसिकांही

'कृष्णदास' के इस पद में भी खंडिता नायिका का वर्णन है।

खंडिता के पद संप्रदाय में मंगला और शृंगार के दर्शन में शीतकाल में ललित एवं मालकौंस में और उष्णकाल में विभास और विलावल में अधिकतर गाये जाते हैं।

मानिनी नायिका के विविध भावों के पद मानके पद कहे जाते हैं, शयन-दर्शन के पश्चात् नित्य इनके गाने की प्रथा है। इन पदों में रस के सभी प्रकार दिखाई देते हैं।

--केदार (उष्णकाल)

मान न कीजे पियसों बावरी
गोविन्द प्रभु सुन्दर कर, गूंथत कुसुमदावरी ।

--बिहाग (शीतकाल)

दौरी दौरी आवत मोहि मनावत
दाम खरच कछु मोल लईरी
'नंददास' प्रभु क्यों नहि आवत
उनके पायन कछु मेंहदी दईरी

--चातुर्मास (मल्हार)

यह रितु रुसिवेकी नांही
सूरदास उठ चलि श्री राधे
दै प्रीतम गलबांही ।

इस पद में मान एवं मिलाप का वर्णन है।

अष्टछाप के महानुभावों ने अपने काव्यों के साथ रस का संबंध किया है। इतना ही नहीं रागों के साथ भी आपने रस का गहरा संबंध जोड़ा है। राग भैरव शान्तरस प्रधान होने से इस राग में शान्त रस प्रधान काव्य–गान सुसंगत होता है अतएव श्री चतुर्भुजदासजी का शान्त-रस-प्रधान निम्न पद देखिए; जो कि मंगला आरती के समय गाया जाता है––

मंगल आरती गोपाल की माई।
नित्य प्रति मंगल होत निरख मुख,
चितवन नैंन विशाल की।
चतुर्भुज प्रभु सदा मंगलनिधि,
बानिक गिरधरलाल की।

अष्टछाप के स्थापक गोस्वामी श्री विट्ठलेश्वरजी का संस्कृत भाषा में रचा हुआ निम्न पद राग भैरव में नित्य प्रति गाया जाता है।

मंगल–मंगलं ब्रजभुवि मंगलम्
× × ×
त्वं जय सततं श्रीगोवर्धनधर
पालय निजदासान्॥

ललित एवं मालकौंस दोनों संयोग-श्रृंगार रस प्रधान राग होने से निम्न-पदों में भी ये ही रस दृष्टिगोचर होते हैं––

सूरदासजी का पद ––राग ललित
"भोर भये मुख देख लजाने
आज अति रेन उनींदे हो लाल.....

श्री कृष्णदासजी का पद––
कहो तुम सांची कहां ते आये
हो भोर भये नंदलाल।

और छीतस्वामी का पद––
मेरे आये भोर पियारे
रेन कहां गमाई.....

मालकौंस में गाये जाने वाले निम्नलिखित पद भी दृष्टव्य हैं––

सूरदासजी––
आये अलसाने सरसाने हम जान पाये।

धौंधी का पद––
भोर ही आये मेरे पाछे जोगिया।

गौरी विप्रलंभ-शृंगार-रस-प्रधान रागिनी है एवं स्वकीया मध्या नायिका तथा प्रोषितभर्तृका जैसी नायिकाओं के भावप्रधान पद इस रागिनी में गाये जाते हैं।

नन्ददासजी का पद––

देखन न देतीं बैरिन पलकें ।

राग सिंधुरा वीररस प्रधान राग माना जाता है। निम्नपदों में वीररस का भाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है––

"आज रघुपति चढ़े लंक गढ़ लैन को" ––हरिनारायण–श्यामदास

जुगल वर आवत हैं गठ जोरे ।– गदाधरदासजी

शास्त्रों में स्वरों का रस के साथ संबंध बताया गया है––

स्वर	रस	स्थायी भाव
सा...	शृंगार रस	रति
रे...	हास्य ,,	हास
ग....	वीर ,,	उत्साह
म....	रौद्र ,,	क्रोध
प...	बीभत्स ,,	जुगुप्सा
ध....	करुण ,,	करुणा
नि...	अद्भुत ,,	विस्मय

नवधा भक्ति से भक्तियोग के नव रसों की उत्पत्ति होती है––

श्रवणं कीर्तनं ध्यानं स्मरणं पादसेवनम्,
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मसमर्पणम् ।
इत्थं नवरसा देवी भक्तियोगे प्रकीर्तिता,
पूजने नवधा भक्तिः रसोल्लासं च जायते ।।

सामान्यतः नव रस निम्नांकित प्रकार के कीर्तनों में प्राप्त होते हैं:––

१. शृंगार रस	प्रायः अधिकतर पदों में
२. हास्य	सव्रीड हास्य के पदों में
३. करुण	विनय के पदों में
४. रौद्र	प्रथम समागम के पदों में
५. वीर	रसावेश के पदों में
६. भयानक	मुग्धता के पदों में
७. बीभत्स	सुरतांत के पदों में
८. अद्भुत	अद्भुत, विस्मय के पदों में
९. शान्त	सुरतांत के पदों में

अन्नकूट के इस पदमें है:—

“आज कहा संभ्रम है तुमारे घर तात”
यह लीला अद्‌भुत रस रसिक होई गावै

इन्द्रमान भंग के इस पद में, जो मालव राग में गाया जाता है:—

जै जै जै मोहन बलवीर
अद्‌भुत रस गावत मुनि कीर ।।

उपर्युक्त विवरण से ज्ञात होता है कि अष्टछाप कीर्तन परंपरा के रागों में एवं पदों में नव रस तथा नायिका भेद स्पष्ट दिखाई देते हैं । इस परम्परा की नवधा भक्ति में भी राग और रस का गहरा संबंध है।

भारतीय-संगीत के घरानों में हवेली-संगीत का प्रचार

अष्टछाप संगीत-परंपरा की विशिष्ट गान-शैली पुष्टिमार्गीय सेवा-प्रणाली द्वारा राजा मानसिंह तोमर के समय से चली आ रही है। ४५० वर्ष पूर्व के इस प्राचीन घराने के पदगान की अनेक चीजें भारतीय संगीत के उत्तम गायकों के प्रसिद्ध घरानों में आज तक ठीक-ठीक प्रसार पाती रही हैं, किन्तु संगीत क्षेत्र का बहु-जन समाज इस तथ्य से अनभिज्ञ है अतः इस विषय का समुचित परिचय देना कर्तव्य समझता हूँ।

अष्टछाप (हवेली) संगीत-परंपरा की द्रुपदधमारादि पद-गान की विपुल-प्रमाण में चीजों का किस समय, कैसे और किस प्रकार प्रसिद्ध घरानों की चीजों में समावेश हुआ होगा इसको समझने के लिए कोई ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त नहीं है, किन्तु यह निश्चित कह सकते हैं कि भारत के उदयपुर, जयपुर, रामपुर, ग्वालियर तथा आगरा घराने के सुप्रसिद्ध गायकों ने अष्टछाप परंपरा की बहुत सी चीजों का अपने-अपने घरानों की चीजों में समावेश कर लिया है। यही नहीं उनकी अन्य घरंदाजी में भी उनका गहरा असर दिखाई देता है।

यह सुप्रसिद्ध है कि, मुगलेआज़म अकबर के समय से ही अष्टछाप-संगीताचार्यों के पद-गान को काफी प्रतिष्ठा प्राप्त हो चुकी थी। उनके दरबार में अन्य गायक-कविजनों द्वारा अष्टछाप का पदगान सुनाया गया था; जिससे प्रभावित होकर सूरदासजी एवं कुंभनदासजी से मिलने की इच्छा प्रगट करना ही नहीं, उन दोनों को निमंत्रण देने का और मिलने का प्रसंग भी "८४ वैष्णवन की वार्ता" में सविस्तार वर्णित है।

इस प्रकार शहंशाह अकबर के समय से ही अष्टछाप परंपरा के वैष्णव -पद राज्यालयों में स्वार्थी गायकों द्वारा पहुंच जाया करते थे। आश्चर्यजनक बात तो यह है कि बहुत कुछ पदों के स्थायी, अन्तरा, संचारी ज्यों के त्यों ही गाते थे और आभोग में दी गई छाप को पलटकर शहंशाह का नाम रख देते थे। इस प्रकार चौर्य-विद्या द्वारा कुछ लोग गायक-कवि होने की प्रतिष्ठा एवं पुरस्कार प्राप्त कर लेते थे। उदाहरण रूप निम्न पद देखिये:—

स्थायी

"सीतल सुवास अतिही छिरक्यो गुलाब रस खसखानो।"

अंतरा

"मधि निर्मल जंत्र-जल त्रिविध पवन जाडो लागत,
हिम रितु वाही ठौर अब आइ रही है मानो" ।।१।।

संचारी

"अतर अरगजा पान फूल तैसोई राग रंग,
सुन्दर त्रियन ऐसे ही मन आनंद आनो" ।।

आभोग

पलटे हुए शब्द : **"अति विचित्र शाहन्शाह जलालुद्दीन"**
असल में : **"प्रभु विचित्र गिरिधर पिय बैठे आछे नीके शोभित,**
योंही ग्रीष्म रितु जुग बरसानो" ।।२।।

पुष्टि सम्प्रदाय में उष्णकाल में खस के बंगले में जब श्रीजी विराजते हैं तब राजभोग के दर्शनों में उपर्युक्त पद गाया जाता है। इस पद के 'आभोग' की प्रथम पंक्ति को पलट कर 'शाहन्शाह जलालुद्दीन' रख दिया गया था।

संभव है द्रुपद-धमार व ख्याल-गायन के राज्याश्रित एवं घरानेदार-गायक-गण उत्तम कलाकार होते हुए अधिकांश काव्य साहित्य से ही नहीं, अक्षरज्ञान से भी अनभिज्ञ होने के कारण उन लोगों को अष्टछापादि वैष्णव सम्प्रदाय की चीजों को कर्णोपकर्ण द्वारा या यत्र-तत्र से अपनाने को मजबूर होना पड़ा होगा। फलतः कुछ समय बाद वे ही वैष्णव-पद-गान की चीजें मुस्लिमादि घरानेदार गायकों के घरानों की बंदिशें बन गई और राज्य-दरबारों के आश्रय में प्रसिद्ध होती रहीं।

इस प्रकार भारतवर्ष के प्रमुख घरानों की चीजों में अष्टछापादि के जिन परंपरागत-पदों का समावेश हो चुका है और जिनमें साहित्य एवं संगीत की दृष्टि से भी कुछ परिवर्तन हुआ दृष्टिगत होता है, उन पर यहां विचार करना संगीत-रसिकों के लिए उपयोगी होगा।

पुष्टिमार्ग (हवेली)—परंपरा के जो द्रुपद-धमारादि पदगायकों की घरंदाजी (खानदानी) चीजें बनकर प्रसिद्ध हो चुकी हैं, उनको मौलिक दृष्टि से देखा जाय तो मुख्यतः दो बातें दृष्टिगोचर होती हैं——(१) साहित्यिक दृष्टि से अशुद्धियां और अपूर्णता। (२) संगीत की दृष्टि से बंदिश-भेद एवं राग-ताल।

पुष्टिमार्गीय संगीत का मूल एवं द्रुपद गायकी के उद्गम का समय समकालीन होने से अष्टछाप-परंपरा की गायकी का अंग द्रुपद-अंग ही माना जाता है। 'ध्रुवपद' शब्द का अपभ्रंश रूप 'द्रुपद' है। 'ध्रुव' का अर्थ है 'अचल' अर्थात् द्रुपद गायकी अपरिवर्तनशील है; नियमबद्ध है। पं. भावभट्टने द्रुपद की व्याख्या में कहा है:——

"जिसमें गीवार्ण और मध्यप्रदेश की भाषा का साहित्य हो, दो चार वाक्य हों, नरनारी की कथा हो, श्रृंगार-रस-भाव हो, पादान्तानुप्रास तथा

पादांतयमक युक्त चार पाद और उद्ग्राह, ध्रुव सहित उत्तम आभोग भी हो उसे द्रुपद कहते हैं।"*

उपर्युक्त व्याख्या का पालन अधिकांश पुष्टिमार्गीय-संगीत में ही दृष्टिगत होता है। जिनमें--गीर्वाण (संकृत) तथा व्रजभाषा (हिन्दी की बोली) का साहित्य, नर (कृष्ण) नारी (गोपी) की कथा, शृंगाररस-भाव, अनुप्रास, चार पाद और उत्तम आभोग सहित की सैकड़ों रचनाऐं प्राप्त होती हैं।

द्रुपद में चार पाद यानी स्थायी, अन्तरा, संचारी, आभोग का होना आवश्यक होता है, किन्य आजकल के द्रुपद-गायक कुछ द्रुपदों में केवल स्थायी-अन्तरा ही गाते हुए नजर आते हैं। अष्टछाप परंपरा के प्रत्येक पद में स्थायी, अन्तरा, संचारी व आभोग का होना अनिवार्य माना गया है। बहुत से पदों में अन्तरा-आभोगादि अधिक भी होते हैं।

ऐसा शायद ही कोई घरानेदार द्रुपद-गायक होगा जिसके पास अष्टछाप परंपरा का द्रुपद पूर्ण या अपूर्ण, शुद्ध या अशुद्ध रूप में न पहुंचा हो। हां, यह संभव है कि, खुद गायक को मालूम न हो कि इस द्रुपद का रचयिता कौन है या कहाँ से प्राप्त हुआ है या किस घराने का है?

आज से ३० साल पूर्व कुछ समय तक पू.पा. गो. श्री व्रजभूषणलालजी महाराज के आश्रय में कांकरोली में रहने का सौभाग्य इस ग्रंथ-लेखक को प्राप्त हुआ था। उस समय कभी-कभी उदयपुर के प्रसिद्ध द्रुपद घराने के गायक सर्वश्री जियाउद्दीन खां एवं इमामुद्दीन खां के गान सुनने का सुयोग प्राप्त होता रहता था। उनकी गायकी आज भी हमारे कर्ण-पट से दूर नहीं है। एक दिन उन्होंने अडाना राग का द्रुपद सुनाया। काफी-थाट की बंदिश में और शुद्ध निषाद पर सम रखते हुए योग्य फिरत के साथ सुन्दर ढंग से निम्नलिखित शब्दों में पेश किया था।

स्थायी **बैनी निरखत भुजंग तज पताल लोप गये,**
तेरे दृग देख मीन जल में दुराये।
अंतरा **मुख देख कलाहीन उडगनपति ब्रह्मधाय,**
दशनन छबि देख तहां अनार दरकाये।"

पश्चात् मेरे प्रश्नों के उत्तर में उन्होंने बताया कि:–

---

* *गीवार्णमध्यदेशीयभाषासाहित्यराजितम्।*
द्विचतुर्वाक्यसंपन्नं नरनारीकथाश्रयम्॥
शृंगाररसभावाद्यं रागालापपदात्मकम्।
पादान्तानुप्रासयुक्त पादांतयमकंवा॥
प्रतिपादं यत्रबद्धमेवंपादचतुष्टयम्।
उद्ग्राहध्रुवकाभोगोत्तमं द्रुपदं स्मृतम्॥
(अनूप संगीत रत्नाकर)

"हमारे खानदानों से जैसा सुना और सीखा है उसी राग में और उन्हीं शब्दों में हम पेश करते हैं।"

"इन चीजों की रचना किस-किस की है, इसका हमें पता नहीं है।"

कुछ द्रुपद ऐसे भी हैं जिनके स्थायी-अन्तरा ही हम गाते हैं।"

क्योंकि हमारे बुजुर्गों की पोथी में इतना ही लिखा हुआ मिलता है और हमारी पोथी में भी स्थायी-अन्तरा ही लिखा हुआ है, जो हमारा खानदानी घराने का प्राचीन-द्रुपद है।"

किन्तु वास्तव में उपर्युक्त द्रुपद-सम्प्रदाय का पद-गान है। जो शयन के दर्शन में गाया जाता है। जिसका सम्पूर्ण-पाठ हस्तलिखित प्रति में निम्न प्रकार पाया जाता है।

(१) *स्थायी* **बेनी निरखत भुजंग तजि पाताल-लोक गये,**
तेरे दृग देख मीन जल में दुरे हो।
अंतरा **मुख देखि कला हीन उडुगन पति व्योम* बसत,**
दसनन द्युति देखत ही अनार दरकि मुरें हो‡ ।।१।।

संचारी **कुच देखि चक्रवाकें लागेरी निस जोग साध,**
तन देखि कंचन पावक में जरि-जरें हो।
आभोग **"सिंघ बली कटि निहारि, लंघन करि विपति मारि,**
'खेम-रसिक' प्रभु निहारि, डारत तन तोरें हों ।।२।।

पुष्टि सम्प्रदाय के प्रमुख केन्द्र नाथद्वारा और कांकरोली, उदयपुर राज्यांतर्गत होने से तथा उदयपुर नरेशों की गुरु-भावना के कारण शुभ अवसरों, मांगलिक पर्वों पर एवं उत्सव-त्यौहारादि पर परस्पर जाने-आने का व्यवहार हुआ करता था। संगीतादि कार्यक्रम भी आयोजित किये जाते थे। अतः उन दरबारी गायकों का नाथद्वारा-कांकरोली से ये चीजें प्राप्त करना सहज था। इसी प्रकार गोकुल-मथुरा, कोटा, कामवन, बनारस आदि स्थानों के पुष्टिमार्गीय प्रधान पीठों द्वारा जयपुर, आगरा, ग्वालियर, रामपुर, बनारसादि के सुप्रसिद्ध घरानों में अष्टछाप-परंपरा के अनेक पदों का किसी न किसी रूप में प्रसार होकर ये घरानेदार चीजें बन चुकी हैं। उन्हीं में से जिन चीजों में पुष्टिमार्गीय संगीत की मौलिक दृष्टि से देखने पर भाषा-दोष, अर्थहीन पाठ, पाठान्तर, अपूर्णता तथा काव्य, रागतालादि--परिवर्तनादि तथा भिन्नता दिखाई देती है, उनमें से कतिपय चीजों की चर्चा यहां प्रस्तुत है। यह संगीतज्ञों एवं संशोधकों के लिए उपयोगी होगी।

रामपुर, जयपुर, ग्वालियर, आगरा आदि उत्तर भारत के जो संगीत घराने सुप्रसिद्ध माने जाते थे एवं उन के प्रसिद्ध गायक व उनकी शिष्य-परंपरा के गायक अब

पाठांतर- * *धाय,* ‡ *पूरें हों*

तक जो चीजें गाते थे और गा रहे हैं, उनका समावेश प्राप्त सभी पुस्तकों की अपेक्षा पं. भातखंडेजी ने अपनी क्रमिक पुस्तक मालिकाओं में अधिकाधिक मात्रा में किया है। इस क्रमिक मालिका की चतुर्थ पुस्तक की ई. स. १९२३ के प्रकाशन की प्रस्तावना में भी निम्नलिखित निर्देश प्राप्त होता है:—

"इस क्रमिक पुस्तक में दी हुई चीजों की भाषा प्राचीन ग्रन्थों और विद्वानों की सहायता से संभवत: शुद्ध करने का प्रयास किया है, तथापि अभी भी कहीं-कहीं भाषा-दोष रहे होंगे।"

"उन चीजों को गुणी लोगों से, जिस प्रकार वे प्राप्त हुई, उसी प्रकार में उन्हें प्रसिद्ध किया है। भविष्य में उनके शुद्ध बोल वाचकों अथवा इष्ट मित्रों द्वारा प्राप्त होने पर अगली आवृत्ति में उनका संशोधन साभार स्वीकार होगा।"

५० साल पहिले के उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि, गुणी जनों ने अपनी चीजों के जो-जो शब्द व्यक्त किये, प्रायः उन्हीं को प्रकाशित किया गया है तथा उनके शुद्ध पाठादि के संशोधनार्थ विज्ञप्ति भी की गई है। परन्तु इस विषय के संशोधन की ओर आजतक कोई प्रामाणिक प्रयास नहीं हुआ। यह भी सत्य है कि इस प्रकार का संशोधन अति अनुभव, श्रम और समय-साध्य है। क्योंकि, भारतीय-संगीत में परंपरागत-घरानेदार चीजों का भंडार विपुल सामग्री से भरा हुआ है। उनमें से उदाहरण के लिये प्रथम हम पं. भातखंडे जी की 'क्रमिक पुस्तक मालिकाओं' तथा 'मारिफुन्नगमात' ग्रन्थ में दी हुई घरानेदार चीजों की ओर दृष्टि डालेंगे। इन ग्रन्थों में जो अष्टछाप-परंपरा में गाये जाने वाले पद घरानों की चीजें बनकर प्रसिद्ध हो चुके हैं और भिन्न ढंग व भिन्न राग या ताल में पाए जाते हैं, उनमें से प्रथम द्रुपद अंग की चीजों को देखिए:—

(१) भातखंडे* क्रमिक पु: ४ में कामोद राग की निम्न चीज इस प्रकार दी गई है:—

राग—कामोद, ताल—झपताल

स्थायी– **"जयति नवनागरी सकल गुन सागरी, केष्ण गुन आगरी दिनन भोरी।**
अंतरा– **"जयति हरि भामनी केष्ण घन दामनी, मत्त गज गामनी नव किशोरी ॥१॥**

हवेली-संगीत-परंपरा में इस पद को राग रामकली व खट में गाया जाता है। जिसका संचारी-आभोग सहित शुद्ध पाठ निम्न प्रकार है:—

स्थायी– **"जयति नव नागरी कृष्ण सुख सागरी, सकल गुन आगरी दिनन भोरी।**
अंतरा– **"जयति हरि भामिनी कृष्ण घन दामिनी, मत्त गजगामिनी नव किसोरी ॥१॥**
संचारी– **"जयति पिय केलि हित कनक नव बेलि सम, कृष्ण कर कलपतरु मिलि विलासी।**

---

* आवृत्ति ३ सन्–१९३९

आभोग– **"जयति वृषभान कुल कुमुद-बन कुमुदिनी, कृष्ण मुख हिमकिरन लख प्रकासी।।२।।**

(२) भा० *क्रमिक पु० ४ से शंकरा रागका द्रुपद निम्नलिखित शब्दों में दिया गया है:–

स्थायी– **हरि हरि छांड के दूसरी न कीजे बात, एक एक घरी तोहे करोरन की जात है ।**
अंतरा– **घरी पल दिन सोये फिरहू न आये तोरे, छिन भंग देह ताको मरन जैसि घात है ।।**
संचारी– **प्रभु को संभार प्यारे बकवो बिसार डार तज के अमृत विष काहे को खात है ।**
आभोग– **काहे हरि दीसे यह सांस को बिस्वास कहा, एक एक छिन में वो तो निकस निकस जात है ।।**

इस द्रुपद को बहुत से लोग तानसेन के गुरु हरिदास स्वामी की रचना समझते हैं, किन्तु इसके रचयिता अष्टछाप के प्रणेता गो. श्री विट्ठलनाथजी के प्रपौत्र गो. श्री हरिरायजी हैं; जिनके "हरिदास", 'रसिक', 'रसिकदास' एवं 'रसिकराय' छाप के सैकड़ों पद सम्प्रदाय में सुप्रसिद्ध हैं। इस पद को बिहाग राग में गाने की प्रथा है। ताल भिन्न नहीं है। इसका शुद्ध पाठ इस प्रकार प्राप्त होता है।

स्थायी– **हरि हरि छांडिकें दूसरी न कीजे बात, एक-एक घरी सो तो करोरन की जात है ।**
अंतरा– **घरी पल दिन खोइ फेरि हू न आवै सोइ, छिन भंगुर देह तामें मरन जैसी घात है ।।१।।**
संचारी– **"हरिकों संभार बेगि बकवो बिसारि डार, तजि अमृत विष काहे को तू खात है ।**
आभोग– **"कहै 'हरिदास' यह स्वांस को बिस्वास नांहि, एक-एक छिन में निकसि-निकसि जात है ।।२।।**

(३) क्रमिक पु० ४ में राग–देशकार, ताल-चौताल का द्रुपद निम्न शब्दों में प्राप्त होता है‡:––

स्थायी– **"जागिए गोपाल लाल प्रकट भयो अंशुपाल,**
मिट्यो अंधकार उठो जननी सुख पाई ।
अंतरा– **"मुकुलित भये कमल जाल कुमुद बिंद्राबन बेहाल,**
त्रिविध ताप मिट्यो जंजाल तन नसाई ।।

उपर्युक्त द्रुपद का केवल स्थायी अंतरा ही प्रकाशित हुआ है। हवेली-संगीत प्रणाली में इस पद को श्रीजी को जगाने के समय विभास या भैरव राग में गाने की प्रथा है। यह 'सूरदास' जी की रचना है। इसका संचारी-आभोग सहित पाठ इस प्रकार है:––

स्थायी– **"जागिये गोपाल लाल, प्रगट भयो अंसुमाल,**
मिटि गयो अंधकार उठौ जननी मुख दिखाई ।

---

* *हिन्दी आवृत्ति सन् १९७०*

‡ *यही पाठ का यह द्रुपद फिरोज फ्रामजी की पुस्तक में पूर्वी थाट के विभास राग में छपा है ।*

अंतरा– “मुकुलित भये कमल जाल, कुमुद वृन्द बन बिहाल,
मेटौ जंजाल त्रिविध ताप तन नसाई ।।१।।
संचारी– “ठाडे सब सखा द्वार कहत नंद के कुमार,
टेरत हैं बार–बार आइये कन्हाई ।
आभोग– “गैयन भई बड़ी बार, भर-भर पय थनन भार,
बछरा गन करि पुकार तुम बिनु जदुराई ।।२।।

(४) क्रमिक पु०४ में राग-परज, ताल-चौताल का द्रुपद निम्नांकित शब्दों में छपा हुआ है—

स्थायी– एरी अंग अंग रंग रानि अतही सयानी पिया जीया मन मानि
अंतरा– “सोलै हूं कला सुहानी बोलत अमृत बानि,
तेरो मुख देखे चंद्र ज्योति हूं लजानि ।।
संचारी– “कटि केसरि कदलि खंब कीर कीसि नासिका,
सिरिफल उरज जाके सोभा हु आनि ।
आभोग– “कहे ‘मियां तानसेन’ सुनो हो सुघर नारि,
तेरो राज रहे जोंलौं गंग जमुन पानि” ।।२।।

उपर्युक्त पाठ में ‘कहे मियां तानसेन’ से यह ‘तानसेन’ की रचना प्रतीत होती है। भातखंडेजी ने घरानों के प्रसिद्ध गायकों व उनकी शिष्य-परंपरा में जो चीज जिस प्रकार गायी जाती थी, उसे उसी प्रकार प्रकाशित की है। अतः इस द्रुपद को भी उन्होंने जिस प्रकार सुना होगा उसी पाठानुसार प्रकाशित किया है। वास्तव में यह पुष्टिमार्गीय कीर्तन-प्रणाली का शयन दर्शन व तदनंतर बिहाग राग में गाया जाने वाला द्रुपद है। यह ‘हरिनारायण स्यामदास’ की रचना है* देखिए:–

स्थायी– ‘री तू अंग अंग रंग रानी अति ही सयानी, पिय जिय मन मानी ।
अंतरा– “सोलह कला समानी, बोलत मधुरी बानी,
तेरो मुख देखि चंद-जोति हूं लजानी ।।१।।
संचारी– “कटि केहरि कदली जंघ, नासिका पर कीर वारों,
श्रीफल उरोज बीच अधिक सयानी ।
आभोग– “हरिनारायण स्यामदास” के प्रभुसों,
तेरो नेह रहो जोंलौं गंग जमुन पानी ।।२।।

** पुष्टिमार्ग-तृतीय गृह (पीठ) प्रणाली में यह द्रुपद चैत्र शु. ३ को तथा होली पीछे जिस रोज मुकुट का सिंगार होता है, उस रोज खास गाया जाता है।*

(५) क्रमिक पु०४ राग-ललित-ताल-चौताल का द्रुपद स्थायी और अंतरा में निम्न शब्दों में छपा हुआ देखिए:—

स्थायी– **"नारायन तेरी गत अगाध मोसे बरनी न जात,**
निरंजन निराकार ।

अंतरा– **"सप्त द्वीप सप्त सागर अष्टकली परवत,**
मेरु सर्वदा रचो निराकार ।।

उपर्युक्त द्रुपद को पुष्टिमार्गीय कीर्तन-प्रणाली में शीतकाल में जब ललित-मालकोंस के पद गाये जाते हैं और श्रीजी को जब किरीट-मुकुट का श्रृंगार धराया जाता है, उस समय श्रृंगार या राजभोग के दर्शनों में गाने का रिवाज है। इसके रचयिता तानसेन हैं। तानसेन के कुछ पद पुष्टिमार्गीय कीर्तन-प्रणाली में गाये जाते हैं। हस्तलिखित कीर्तन-संग्रहों में इसका सम्पूर्ण पाठ इस प्रकार दिया गया है:–

राग–मालकौंस

स्थायी– **तेरी गति अगाध मोपें बरनी न जात,**
निरंजन निराकार नारायण ।

अंतरा– **सप्त–द्वीप सप्त सागर अष्टकुलि परवत,**
मेरु रच्यो घारायन ।।१।।

संचारी– **तूही चंद तूही सूरज तूही उडुगन के तारे,**
तूही तेज पवन पानी तूही धरनी आकासमान ।

आभोग– **'तानसेनके' प्रभु घट–घट में करत ज्ञान,**
अगम निगम सकल सृष्टि धरत ध्यान ।।२।।

(६) क्रमिक पु० ४ में राग-अडाना की धमार का निम्नलिखित पाठ प्राप्त होता है:—

स्थायी– **काल तुम हा हा करे छूटे मोहन अब तुम वही ढंग कीने ।**
अंतरा– **इतने ही में भूल गए हो, निपट चतुर प्रवीने ।।१।।**

उक्त धमार में 'चतुर' शब्द होने से कोई पं. भातखंडेजी की रचना होने का भ्रम न करें। अष्टछाप कीर्तन-परंपरा की यह धमार है। संचारी व आभोग सहित इसका संपूर्ण पाठ अधोलिखित है। यह 'सुघरराय' की रचना है।

राग–अडाना, ताल–धमार

स्थायी– **काल्ह तुम हा हा करे छूटे हो मोहन, अब तुम वही ढंग कीने ।**
अंतरा– **इतने में ही भूलि गये हो, निपट चतुर प्रवीणे ।।१।।**

संचारी– **लंगर होरी में लागोई आवे, गारी-गरोज सागरे महीने ।**
आभोग– **ऐसे निलज तुम कबके भये हो, 'सुघरराय' रंग भीने ।।२।।**

इसी प्रकार घरानों के गायकों से प्राप्त की हुई अन्य वैष्णव सम्प्रदायों की चीजें भी दी गई हैं। जैसे:—

(७) (क्रमिक पु० ४) राग–परज का द्रुपद 'सोहत सीस मुगट' जिसका स्थायी और अंतरा ही दिया गया है। वैष्णव सम्प्रदाय में यह ईमन या कल्याण राग में सुप्रसिद्ध है, जिसका सम्पूर्ण पाठ इस प्रकार पाया जाता है:—

स्थायी– **सोहत *सीस मुकुट श्रवन कुंडल, भाल तिलक गुंजमाल,**
‡पीताम्बर कटि काछिनी बिराजें ।

अंतरा– **शंख चक्र गदा पद्म, कर मुरली अधर धरे,**
बृन्दावन चंद 'मधि गोपिन संग राजें ।।१।।

संचारी– **गोपीनाथ मदनमोहन श्रीपति श्रीनारायन,**
ईश्वर अनादि अनंत सरूप साजें ।

आभोग– × × × **'बद्रीदास'† के प्रभु सप्त सुर छाय रहे,**
मुरली में तीनों ग्राम मधुर मधुर बाजें ।।२।।

(८) (भा. क्रमिक पु–३) सारंग राग का अधोलिखित द्रुपद स्थायी व अंतरा में ही पाया जाता है; जिसका पाठ इस प्रकार छपा हुआ है:—

राग–बिंद्रावनी सारंग, ताल–चौताल

स्थायी– **धन धन बिन्द्रावन धन धन गोकुल,**
जमुना के तट पर पीपर छाई री ।

अन्तरा– **धन गोपी ग्वाल बाल, धन वाहा गूंद माल,**
धन मुरली यह श्याम बजाई री ।।

अष्टछाप–परंपरा में उपर्युक्त पद का राजभोग–दर्शन के समय गाये जाने वाले पदों में समावेश होता है; जिसका सम्पूर्ण पाठ इस प्रकार है—

स्थायी– **धन धन बृन्दावन धन धन यह लोक,**
जमुना निकट बर पीपर छांई री ।

अंतरा– **धन यह गोपी ग्वाल, धन यह सखा संग,**
धन मुरली जिंहि स्याम बजाई री ।।१।।

संचारी– **धन यह पवन, सीतल सुगंध मंद,**
धन यह बन जहां धेनु चराई री ।

---

* पाठान्तर:–शोभित ‡ पाठान्तर–पीताम्बर पीत † 'अग्रदास' के प्रभु ।

आभोग– **"चतुर बिहारी" गिरिधारी पिय-प्यारी केलि,**
धन ब्रज भूमि मानों बानक बनाई री ।।२।।

(९) (भा० क्रमिक पु–३) *बिन्द्रावनी–सारंग,* चौताल में "सूर आयो सिर पर" द्रुपद का स्थायी से आभोग तक पूर्ण पाठ दिया गया है, किन्तु कहीं-कहीं पाठ भेद पाया जाता है । पुष्टिमार्गीय कीर्तन-प्रणाली में यह द्रुपद उष्णकाल ज्येष्ठ मास में राजभोग-दर्शन के समय राग-सारंग, चौताल में गाया जाता है, प्राचीन लिखित संग्रहों में शुद्ध पाठ इस प्रकार हैं:—

स्थायी– **सूर आयो सिर पर, छाया आई पांयन तर,**
पंथी सब झुक रहे, देखि छांह गहेरी ।

अंतरा– **धंधी जन धंध छांड़, रहे री धूपन के लिए,**
पसु पंछी जीव जंतु, चिरियां चुप रहे री ।।१।।

संचारी– **ब्रज के सुकुमार लोग दै दै किंवार सोये,**
उपवन की बयार तामें पौठे पिय हे प्यारी ।

आभोग– **"सूर" अलबेली चलि, काहे कों डरात है,**
माघ की मध रात जैसें जेठ की दुपहरी ।।२।।

(१०) भातखंडे क्रमिक पु०३ में राग–देश–चौताल का निम्न लिखित द्रुपद स्थायी अंतरा में इस प्रकार प्रकाशित हुआ है:—

स्थायी– **एरि सखि सावन आयो, बिरहा अगन मोपें,**
कल ना परत प्रान प्यारे बिन ।

अंतरा– **चहुं ओर में बादल, उमड़ घुमड़ आये,**
छतियां उमगी कान कारे बिन ।।

उपर्युक्त द्रुपद का अपूर्ण पाठ ही प्रचार में आजकल सुनने में आता है । जो पुष्टिमार्गीय हवेली परंपरा में वर्षाॠतु के आगमन के दिनों में राग-सोरठ या सोरठ-मल्हार राग में गाया जाता है। जिसका संचारी व आभोग सहित पाठ निम्न प्रकार से है। यह प्राचीन पाठ से मालूम होता है जबकि क्रमिक पुस्तक के उपर्युक्त पाठ में स्थायी का दूसरा, तीसरा तथा अंतरे का प्रथम आवर्तन बदला हुआ दिखाई देता है:—

स्थायी– **ऐरी सखि सावन आयो, बरखा रितु आगम,**
नैना तो चुवत प्रान प्यारे बिनु ।

अंतरा– **आज की अंधेरी रैन, बिजुरी सी चमकत,**
छतियां उमगी कान्ह कारे बिनु ।।१।।

संचारी– **दादुर मोर पपैया बोले, कोकिल की कुहुक,**
मुनि छांडिहू न मारे बिनु ।
आभोग– **इतनी अरज मेरी 'सूर' के, प्रभु सों,**
घायल को कल ना परत पुकारे बिनु ।।२।।

(११) भातखंडे क्रमिक पु० ३ में राग–मालकौंस, सूलताल में दिया हुआ द्रुपद का निम्नलिखित पाठ भी अपूर्ण है, जो इस प्रकार है:—

स्थायी– **आवन कह गये अजहूं ना आये,**
सब निस बीति मोहे गिनत तारे ।
अंतरा– **दीपक चन्द्र जोत, मलिन भई जात है,**
कोने दूतियन बिरमाए प्यारे ।।

अष्टछाप-परंपरा प्रणाली में यह द्रुपद शीतकाल के मार्गशीर्ष पौष-मास में मंगला-समय गाने की प्रथा है । संचारी-आभोग सहित पूर्ण पाठ निम्नलिखित प्रकार से प्राप्त होता है। राग-ताल में कोई परिवर्तन नहीं है।

राग–मालकौंस, सूलताल ।
स्थायी– **आवन कह गये अजहू न आये,**
सब निसि बीती मोहे गिनत ही तारे ।
अंतरा– **दीपक ज्योति मलिन भई है,**
किन दूतियन बिरमाये प्यारे ।।१।।
संचारी– **तमचुर बोले बगर सब खोले,**
फूले कमल मधुप गुंजारे ।
आभोग– **"तानसेन" के प्रभु तुम बहु नायक,**
तोऊ मेरे नैनन के तारे ।।२।।

(१२) भातखंडे क्रमिक पु०२ राग-बिलावल, ताल-झपताल में जो द्रुपद-अंग का सादरा प्रसिद्ध हुआ है, उनके राग-ताल पुष्टिमार्गीय प्रणाली से भिन्न नहीं है, किन्तु उसमें स्थायी-अन्तरा ही दिया गया है, जिसका सम्पूर्ण पाठ हवेली-परंपरा में प्राप्त होता है। यह 'सूरदास' की रचना है और बाललीला में प्रात: मंगला के दर्शन के बाद शृंगार तक गाया जाता है। देखिए:—

राग–बिलावल, ताल–चर्चरी (झपताल)
स्थायी– **ले तेरी लकरी लै तेरी कामरि,**
बछरा चरावन हौं न जैहों (माई)। ।
अंतरा– **संग है ग्वाल बलभद्र क्यों न मोकलौ,**
एकलो बन में हों जु डरेंहौं ।।१।।

संचारी– **सघन बन में कछु खबर नाहिन परै,**
संग के ग्वाल सब मोहि डरावै हो ।

आभोग– **चात्रक मोर चकोर मिलि यों रहे,**
कृष्ण-कृष्ण कहि मोहि खिजावै हो ।।२।।

आभोग– **'सूर' के प्रभुको कौन संग मोकलों,**
संगही ग्वाल–बलभद्र भैया हो ।।२।।

(१३) भातखंडे क्रमिक भाग–२ में अल्हैया बिलावल राग में छपे हुए द्रुपद का पाठ इस प्रकार है:––

राग–अल्हैया बिलावल, ताल-चौताल ।

स्थायी– **आज और काल्हि और दिन प्रति और और,**
देखिए रसिक गिरिराजधरन माई री ।

अंतरा– **दिन प्रति नई छबि बरने सो कौन कवि,**
पान कीजे रीझ रहिये सदाही सरन ।।

संचारी– **सोभा श्याम अंग-अंग लाजत कोटिक अनंग,**
छबि की उठत तरंग विश्व को मनहरन ।

आभोग– **'चत्रभुज' प्रभु गिरिधारी को सरूप सुंदर,**
देखिए सिंगार बाग बरन बरन ।।

हवेली संगीत का उपर्युक्त द्रुपद श्रृंगार के समय गाये जाने वाले पदों में सुप्रसिद्ध है। अल्हैया बिलावल राग में और चौताल में ही गाया जाता है। यह अष्टछापी 'चत्रभुजदासजी' की रचना है।

उपर्युक्त पाठ में कुछ पाठान्तर है और दो तीन पंक्तियां इधर उधर हो गई हैं। जिसका शुद्ध पाठ सम्प्रदाय में निम्न प्रकार पाया जाता है:––

स्थायी– **माई री आजु और काल्ह और दिन प्रति औरहिं और,**
देखिए रसिक गिरिराजधरन ।

अंतरा– **छिनु प्रति नव छबि बरनें सो कौन कवि,**
नितहीं सिंगार बागे-बरन-बरन ।।१।।

संचारी– **सोभा सिन्धु अंग अंग मोहत कोटि अनंग,**
छबि की उठत तरंग विश्व के मनु हरन ।

आभोग– **'चत्रभुज' प्रभु को रूप सुधा नैन पुट,***
पान कीजे जीजें रहिये सदाई सरन ।।२।।

** पाठभेद–चत्रभुज प्रभु गिरिवर को सरूप सुधा,*

(१४) क्रमिक पुस्तक–२ में उपर्युक्त द्रुपद के अतिरिक्त उसी राग-ताल में *'आज की सिंगार सुभग'* द्रुपद भी प्रसिद्ध हुआ है। यह द्रुपद भी पुष्टिमार्गीय सेवा में श्रृंगार-समय प्राय: पाग और पटुका का सिंगार श्रीजी को होता है तब अल्हैया-बिलावल चौताल में ही गाया जाता है। पुस्तक में छपे हुए इस द्रुपद के पाठ में कोई खास भेद नहीं है। केवल आभोग में ही पाठान्तर होने से उसे यहाँ दुहराना अनावश्यक है। अतः पुष्टि-सम्प्रदाय का प्रसिद्ध शुद्ध पाठ ही प्रस्तुत है––

स्थायी– **आजको सिंगार सुभग सांवरे गोपाल जु को,**
कहत न बनि आवे देखेही बनि आवै ।

अन्तरा– **भूखन बसन भांति-भांति अंग-अंग छबि कही न जात,**
लटपटी सुदेस पाग चित्तकों चुरावै ।।१।।

संचारी– **मकर कुंडल तिलक भाल, कस्तूरी अति रसाल,**
चितवनि लोचन बिसाल, कोटि काम लजावै ।

आभोग– **कंठसरी बनी माल, कपटुका कटि छोरन छबि,**
निरखि त्रिभुवन त्रिया को जु* धीरज रहावै ।।२।।

(१५) भातखंडे भाग–२ में छपा हुआ राग-भैरव का (सादरा) द्रुपद स्थायी-अन्तरा में ही प्रकाशित हुआ है जिसके शब्द निम्न प्रकार हैं:––

राग–भैरव, ताल–झपताल

स्थायी– **आज नंदलाल सखि प्रेम माधक, पिये,**
संग ललना लिए तीर जमुना बरन ।

अंतरा– **फूलि केसर कमल मालती सघन बन,**
मौंद सोगौंध सीतल समीरे बरन ।।

उपर्युक्त सादरा पुष्टि-सेवा-क्रम में मंगला (क्वचित् श्रृंगार) के समय में भी राग-खट में उष्णकाल की ऋतु में गाया जाता है। इनमें यमुना-तट की लीला का भावनामय आठ तुकों में सुन्दर वर्णन किया है। इनमें से यहाँ पर कुछ पंक्तियां दी गई हैं। क्रमिक पुस्तक के पाठ में स्थायी और अंतरा के अन्त में 'बरन' शब्द संगत लगा दिया है, जो मूल पाठ में स्थायी के प्रारंभ में 'बने' शब्द है। देखिए:––

राग–खट, ताल–चर्चरी (झपताल)

स्थायी– **बने आज नंदलाल सखी प्रेम मादिक पीयें,**
संग ललना लिये, जमुना तीरें ।

अंतरा– **फूलि केसर कमल मालती सघन बन,**
मंद सुगंध सीतल समीरें ।।१।।

---

* *पाठ भेद (अ) धीरज धरावे (ब) धीरज मन लावे ।*

संचारी– नीलमनि बरन तन कनक मंडित बसन,
परम सुंदर चरन परस माला ।
आभोग– मधुर मृदु हास परकास दसनावली,
छबि भरे इतरात दृग बिसाला ।।२।।
संचारी– रसिकमनि रंग भरे बिहरत वृंदाबिपिन,
संग सखि-मंडली प्रेम पागी ।
आभोग– कहत "भगवान हित रामराय" प्रभु,
सोई जानें जाहि लगनि लागी ।।८।।

(१६) भा. क्रमिक पु. २ में भैरव राग, ताल-चौताल में छपे हुए निम्नलिखित द्रुपद का पाठ इस प्रकार हैः–

स्थायी– सघन बन छायो द्रुम बेली माधो भवन अत प्रकास,
बरन बरन पुष्प रंग लायो ।
अंतरा– कोकिला खंजन कीर कपोत अत आनंदकारि,
चहूं ओर झर बरसायो ।।
संचारी– सप्त सुर तीन ग्राम एकईस मूरछान,
ओवत जोवत लाग डांट कर दिखायो ।
आभोग– कहे मियां "तानसेन" सुनो शाहा अकबर,
प्रथम राग भैरव गायो ।।

इस द्रुपद में "तानसेन" की छाप संभवतः मुस्लिम द्रुपद-गायकों द्वारा लगायी गयी है किन्तु वास्तव में "सुघरराय" की छाप है । पुष्टिमार्गीय संगीत-प्रणाली में वर्षों से यह पद प्रायः प्रातः काल वसंत पंचमी के पूर्व दिनों में मंगला-समय या तदनंतर श्रृंगार के ओसरा में गाने की प्रथा है । हस्तलिखित प्रति में इस प्रकार पाया जाता हैः–

स्थायी– सघन बन छायो द्रुमबेलि *मधि भुवन अति प्रकास,
बरन-बरन पुहुप रंग लायो ।
अंतरा– बोलत कोकिला कीर अति ही आनंद भरे,
चहूं ओर रस बरसायो ।।१।।
संचारी– सप्त सुरन तीन ग्राम एकईस मुरछना,
उनंचास कोटि तान गाय प्रभु रिझायो ।
आभोग– कहत 'सुघरराय" सुनो हो सुघर नारि,
प्रथम राग भैरों गायो ।।२।।

---

* *पाठान्तर–मध्य*

(१७) क्रमिक पु. २ में छपा हुआ भैरव राग का निम्नलिखित द्रुपद है:-

स्थायी-**सब मिल गायो बजायो मिरदंग,**
आज हमारे लालन की बरस गांठ ।

अंतरा- **कनक थार भर भर मुक्ताफल,**
कर करि न्योछावर पायो ।।

संचारी-**नव नव पल्लवन की माला,**
द्वार द्वार बंधायो ।

आभोग- **"बंसीधर" प्रभु को जस सुनियत है,**
सबही को लागत है सुहायो ।।

उक्त द्रुपद की रचना "आनंदघन" की है। हवेली संगीत में श्रीकृष्ण-जन्म की बधाई के पदों में यह संगृहीत है। राग-मालकौंस चौताल में बधाई के दिनों में प्रातः मंगला या शृंगार के समय गाने की प्रथा है। पाठ निम्नांकित प्रकार से है:-

स्थायी- **सब मिल आवो, गावो बजाओ मृदंग,**
आज हमारे लाल जु की बरस गाठ ।। सब०

अंतरा- **कनक थार भरि भरि मुक्ताफल लै,**
न्योछावर करवावो ।।१।।

संचारी- **नव-नव पल्लव बंदन-माला,**
द्वार द्वार *बंधायो ।

आभोग- **"आनंदघन" प्रभु को जन्म सुनत ही,**
लाग्यो सुजस ‡सुहायो ।।२।।

(१८) भा० क्रमिक भा० २ में पूर्वी-राग के द्रुपद का केवल स्थायी और अंतरा निम्न प्रकार से मुद्रित हुआ है:—

स्थायी- **लोचन लाल लाल चूनरी लाल लाल,**
हीरा मोति लाल लाल ।

अंतरा- **गरे बीच हार लाल नासिका बेसर लाल,**
पिया लाल प्यारि लाल सेज लाल ।।

पुष्टिमार्गीय सेवा-प्रणाली में शीत ऋतु में जब घटाएँ होती हैं, तब घटा के रंग के अनुसार उसी रंग के श्रीजी को वस्त्राभूषण तथा गादी, तकिया, पिछवाई आदि साज सजाये जाते हैं। जैसे-श्याम-घटा के रोज श्याम, श्वेत-घटा के रोज श्वेत, हरी घटा के रोज सभी साज शृंगार हरे रंग के होते हैं। उपर्युक्त द्रुप का सम्प्रदाय में लाल-घटा के दिन गाये जाने वाले पदों में समावेश होता है इसे प्रातः सेवा के राजभोग-समय राग-टोडी, चौताल में या सायं-सेवा में भोग दर्शन में राग-पूर्वी, चौताल में भी गा सकते हैं। संचारी-आभोग सहित उसका पाठ निम्नलिखित शब्दों में प्राप्त होता है:-

---

पाठान्तर- * बंधावन ‡ सुहावन

स्थायी––**लोचन लाल लाल चूनरि की सारी लाल,**
हीरा मोती लाल-लाल ।।
अंतरा–**गरे बीच हार लाल श्याम का सिंगार लाल,**
पिया लाल प्यारी लाल सेज लाल ।।१।।
संचारी–**प्यारी को बेसर लाल, तामें एक मोती लाल,**
बाजूबंध लाल-लाल, चलत उमगि चाल ।।
आभोग–**'तानसेन' प्रभु लाल, ब्रज के सब गोपी ग्वाल,**
तामें एक मदन-गुपाल लाल ।।२।।

(२०) क्रमिक पु.२ में राग पूर्वी की धमार का पाठ निम्नांकित है––

स्थायी–**अहो कैसे जान पावोगे भर होरी में,**
जब* जो गये तुम भाजे ।
अंतरा–**गारी** दूंगी दिलाऊँ सबन पै,**
मुख मीडोंगी आजे ।।

मालूम होता है कि उपर्युक्त धमार की शब्द-रचना भी गायकों में कर्णोपकर्ण द्वारा पहुंच गई है, स्थायी के चार आवर्त्तन बनाने के लिए 'कैसे जान पावोगे' शब्द बढ़ा दिये गये हों। अथवा नई रचना दिखाने के लिये शब्दों में घट-बढ़ करना उचित समझा गया हो। वास्तव में यह धमार महाकवि 'जगन्नाथ कविराय' की रचना है, पुष्टिमार्गीय हवेली संगीत में इस धमार को फाल्गुन मास में मंगला के दर्शन के समय राग 'ललित' में गाने की प्रथा है। सम्प्रदाय के लिखित संग्रहों में उसका सम्पूर्ण पाठ निम्न प्रकार से प्राप्त होता है:–

स्थायी–**अहो हरि होरी में, जब जो गये तुम भाज ।**
अंतरा–**गारी देहूं भरूं भराऊं, मुख मांडोंगी आज ।।११।।**
संचारी–**हों अपनो मन भायो करिहों,**
सुनि कुंवर ब्रजराज ।
आभोग–**"जगन्नाथ कविराय" के प्रभु माई,**
सकल घोख सिरताज ।।२।।

(२१) भातखंडे क्रमिक पु. ५ में नट-राग का द्रुपद अंग का सादरा स्थायी-अंतरा में ही पं. भातखंडेजी को गायकों के घराने से प्राप्त हुआ है; जो निम्न प्रकार से प्रकाशित किया गया है।***

---

* कल ** गारी मैं देहूं देवैहूं सबन से (मारिफुन्नगमात भा. २)
*** आवृत्ति–हिन्दी, सन १९६३, पृष्ठ-१८२।

स्थायी–**जुवति जूथ सन फाग, खेलत नंद के लाल,**
कुंवर होरी हो होरी बोलना।

अंतरा–**गाय नटनारायण मुदित चेत सुफाग,**
चहूं दिस मिल गोपबाल बिन्द टोलना ।।

उपर्युक्त द्रुपद-सम्प्रदाय के सर्वप्रथम कीर्तनाचार्य श्री कुंभनदासजी की रचना है। उन्होंने श्रीजी के सम्मुख होरी-धमार के दिनों में नट राग में ही इस पद का गान किया, यह स्पष्ट होता है । आज भी अष्टछाप परम्परा में राग-नट ताल-चर्चरी (झपताल) में माघ शुक्ल पूर्णिमा के बाद फाल्गुन शुक्ल दशमी तक सायं सेवा-क्रम के 'भोग समय' में गाये जाने वाले पदों में यह पद (कीर्तन) भी गाया जाता है। यह पांच तुकों का पद है। जिसका संचारी-आभोग सहित शुद्ध पाठ इस प्रकार है:—

स्थायी–**जुवति जूथ संग फाग, खेलत नंदलाल,**
कुंवर होरी हो होरी हो बोलना ।।

अंतरा–**गावें नटनारायण राग, मुदित देत चैत फाग,**
चहूं दिस जुरे ग्वाल-बाल बृन्द-टोलना ।।१।।

संचारी–**बाजते आवज उपंग, बासुरी सुर-बीन चंग,**
संख बंस झांझ डफ, मिरदंग ढोलना ।।

आभोग–**चलत सुअनेक ताल, सुघरराय श्री गोपाल,**
बेनु मध्य गान करत होरी हो होलना ।।२।।

× × × ×

'कुंभनदास' प्रभु गिरिधर, प्रेम सिन्धु प्रकट कियो,
सुर-बिमान बिथकि देखि ब्रज किलोलना ।।५।।

(२२) क्रमिक-पुस्तक-५ में भैरव मेल जन्य राग बिभास की दी गई चीजों में द्रुपद-अंग का सादरा स्थायी-अन्तरा में ही पाया जाता है, जो कि निम्न प्रकार है:—

स्थायी–**चिरियां चुहचुहानि सुन चकइ की बानि,**
कहत जसोदा रानि जागो मोरे लाला।

अंतरा–**रवि की किरन जानि कुमुदिनी मुकलानि,**
कमलिनी बिकसानि दधि मथे बाला ।।

यह चीज भी पुष्टिमार्गीय हवेली-संगीत का प्राचीन पद है। यह अष्टछाप के सुप्रसिद्ध कवि और संगीताचार्य 'नंददास जी' की रचना है। प्रात: श्रीजी को जगाने के समय राग-विभास में या भैरव में भी गाने की प्रथा है किन्तु अधिकतर राग-बिभास में ही गाया जाता है, यहां ध्यान रहे कि हवेली-संगीत का विभास राग बिलावल-घाट का है। वसन्त और ग्रीष्म ऋतु में श्रीजी को जगाने के समय इस पद-गान से अतिशय सुन्दर और भक्तिमय वातावरण बन जाता है। इनका संपूर्ण पाठ इस प्रकार है–*

स्थायी–**चिरैयां चुहचुहांनी सुनि चकई की बानी,**
कहत जसोदा रानी जागो मेरे लाला ।।

अंतरा–**रवि की किरन जानि, कुमुदिनी सकुचानी,**
कमलनि बिकसानी दधि मथें बाला ।।१।।

संचारी–**सुबल श्रीदामा तोक उज्ज्वल बसन पहिरें,**
द्वार ठाड़े टेरत हैं बाल-गोपाला ।।

आभोग–**"नंददास" बलिहारी उठौ क्यों न गिरिधारी,**
सब-कोऊ दुख्यो चाहे लोचन बिशाला ।।२।।

(२३) भातखंडेθ क्रमिक भाग-६ राग-मधमाघ सारंग ताल-चौताल का ध्रुपद निम्नलिखित शब्दों में छपा हुआ है:––

स्थायी–**अपने-अपने घरकी किवाड दे दे सोय रही,**
आलीरी ऐसो समय तूं अब बुलाये का न ले।

अंतरा–**सूरज आयो सीस पर छाई परछाई भूले है,**
बटोही बाट धूप देख गहरी ।।

---

* पं. पटवर्धनजी के राग-विज्ञान भाग-२ में भी राग 'देशकार' झपताल में निम्नांकित पाठ प्राप्त होता है।

स्थायी–चिड़ियां चुचवाती चक्रवाक सुन बानी।
कहत यशोदा रानी, जागो मेरे लाला ।।ध्रु।।

अंतरा–रवि के किरण जानि, कुमुदिनि बिकसानी,
समुदित सकुचानि, दधि मथित बाला ।।१।।

इस पाठ का अर्थानुसंधान ठीक नहीं है। शायद किसी गायक से सुना हुआ पाठ प्राप्त किया होगा।

θ ई.स. १९३७ मराठी आवृत्ति पहिली।

इस प्रकार उपर्युक्त द्रुपद का स्थायी और अन्तरा ही प्रकाशित है। हवेली-संगीत प्रणाली में यह पद ग्रीष्म ऋतु जेष्ठ मास में श्रीजी के राजभोग-दर्शन में मघमाघ-सारंग में ही गाने की प्रथा है, परन्तु बंदिश और पाठान्तर में भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। संचारी व आभोग सहित पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी–**अपने अपने घर के किवार दै कें सोय रहे,**
ऐसे में तू क्यों न सुख लहैरी ।।

अंतरा–**सूर आयो सीस पर छाया आई पांयन तर,**
बाट के बटाउ थके देखि धूप गहैरी ।।१।।

संचारी–**पहिरें तन स्वेत सारी* मोतिन की माल गरें,**
सोल्है सिंगार अंग क्यों न सजिहैरी ।।

आभोग–**'सूरदास मदनमोहन' तलफत जैसें चातक मीन,**
माघ की मध्य रात जैसें जेठ की दुपहैरी ।।२।।

(२४) भा. क्र. पु. ६ में मघमाघ–सारंग, झपताल में प्रसिद्ध किया हुआ द्रुपद (सादरा) का भी केवल स्थायी अन्तरा ही और अशुद्ध पाठ भेद युक्त निम्न प्रकार दृष्टिगत होता है।

स्थायी– **"आज अंजन दियो, राधिका नैन को ।**
अंतरा– **"मीन म्रिग हीन कुल, लजत खौंजन नरेस,**
अधक चंचल सुरस, श्यास सुख नैन को ।।

उपर्युक्त पद श्री 'सूर' की रचना है। तीन तुकों में 'सूर' ने श्री राधिका जी के स्वरूप-वर्णन का सुन्दर पद-गान किया है। सम्प्रदाय में यह द्रुपद जब राजभोग दर्शन-समय गाया जाता है, तब इसी राग ताल में गान कर सकते हैं। किन्तु अधिकतर दशहरे के पूर्व दिनों में शयन समय (मान) राग-कानड़ा में गाने की प्रथा है। सम्पूर्ण पद का प्राचीन पाठ इस प्रकार है:—

स्थायी– **आज अंजन दियो राधिका नैन कों ।।**

अंतरा– **मीन गुन हीन मृग लज्जित खंजन चकित,**
अधिक चंचल सरस स्याम सुख दैन कों ।।१।।

संचारी– **दसन दामिनि उदित, भौंह मनमथ फंद,**
सुलप लर लटकत, रहत नहिं चैन कों ।।

आभोग– **कनिक कंचुकी बंद, हार ग्रीवा रुरत,**
निरखि गगन गयो, उडुपति सुगेंन कों ।।२।।

---

* पाठान्तर–गरें गुंजमाला धारी।

संचारी– **चरन नुपूर रुनित, क्षुद्र-घंटिका क्वनित,**
कनक सम गौर सोभा, लज्जित उस मैंन कों ।।
आभोग– **'सूर' सुन्दर नवल, रसिक गिरिधर देखि,**
चली गज गति मानों, मदन-गढ लेंन कों ।।३।।

(२५) भा.* क्रमिक पु. ६ में देखिए, राग-नायकी, चौताल का द्रुपद भी गायकों के घराने की चीज बन जाने पर मात्र स्थायी और अन्तरा में ही एवं विसंगत शब्द-रचना का पाठ चतुर पंडित को जो प्राप्त हुआ है, यह निम्न प्रकार से है:—

स्थायी– **सुन्दर बिन सुख सदन श्याम को, निरखे नैनन मन थाके ।**
अंतरा– **या बिधुनते निकसे री मोहन, तुछको झरुके झांके ।।**

हवेली–संगीत का यह प्रसिद्ध द्रुपद पुष्टि-सेवा प्रणाली में आषाढ़ शुक्ल २ (रथ-यात्रा) के रोज शयन के दर्शन में राग-अडाना चौताल में गाया** जाता है। इस द्रुपद के मूल गायक और रचनाकार महाकवि 'सूरदासजी' हैं। रथ में विराजित श्री कृष्ण की झांकी के भावानुसंधानयुक्त इस कीर्तन में कितना सुन्दर भाव भरा हुआ है, –

स्थायी– **सन्दर बदन सदन, सोभा को, निरखि नैन मन थाक्यो ।**
अन्तरा– **हौं ठाडी वीथिन ह्वै निकस्यो, उझकि झरोंकन झांक्यों ।।१।।**
संचारी– **"मोहन एक चतुराई कीनी, गेंद उछारि गगन मिस ताक्यो ।।**
आभोग– **बासेंरी लाज बैरिन भई मोकों, मैं गमार सुख ढांक्यों ।।२।।**
संचारी– **"चितवनि में कछु करि गये मोतन, मन न रहत क्यों राख्यौ ।।**
आभोग– **"सूरदास प्रभु" सर्वसु लै गये, हंसत हंसत रथ हांक्यौ ।।३।।**

(२६) भातखंडे क्रमिक पु.६, पृष्ठ–३५० (आवृत्ति–१ सन् १९३७) पर राग-खट, ताल-झपताल में दिया हुआ द्रुपद (सादरा) का पाठ निम्न प्रकार से है:—

स्थायी– **"आज नंदलाल मुख चौंद नैंनन निरख, परम मंगल भयो भुवन मेरे ।**
अंतरा– **"कोटि कंदर्प लावण्य एकत्र करि,वारों तबहि जनहि नेक हेरे ।।**
संचारी– **"सकल सुख सदन हरखित वदन,गोपवर प्रबल दल मदन जतो संग हेरे ।**
आभोग– **कहो कोउं कैसेंहु नाहिं सुध बुध रहे, 'गदाधर मिश्र' गिरिधरन ठेरे ।।**

हवेली–संगीत परंपरा के अनुसार ही राग-ताल में पं. भातखंडेजी को उपर्युक्त पद प्राप्त हुआ है। सम्प्रदाय में इस पद को प्राय: प्रबोधिनी (कार्तिक शुक्ल-११) के पश्चात् मंगला-दर्शन के समय गाने की प्रथा है। शब्दों में कुछ अशुद्धि है, शुद्धि निम्न प्रकार है:—

---

* *आवृत्ति पहिली सन् १९३७, पृष्ठ–२०२*

** *क्वचित मल्हार राग में भी गाया जाता है।*

स्थायी का पाठ ठीक है ।

अन्तरा–की दूसरी पंक्ति में 'जनहिं' के स्थान पर 'जबहिं' चाहिए ।

संचारी–दूसरी पंक्ति में 'जतो' शब्द निरर्थक है ।

'गोपवर प्रबल दल मदन संग घेरे' चाहिए ।

आभोग–प्रथम पंक्ति में 'रहे' की जगह 'बने' और दूसरी 'ठेरे' के स्थान पर 'टेरे' चाहिए ।

उपर्युक्त पाठ सम्प्रदाय के मुद्रित संग्रहों के अनुसार शुद्ध किया गया है, किन्तु एक प्राचीन हस्तलिखित पोथी में दिया हुआ निम्न पाठ अधिक सुसंगत कहा जायगा ।

स्थायी और अन्तरा में खास कोई परिवर्तन नहीं है ।

संचारी–**"सकल गुन सदन हरखित बदन, गोप दल प्रबल बल मदन दल संग घेरे ।**
आभोग– **"कहौ कोउ कैसेउ नाहिं सुध बुध रहे, 'गदाधर मिश्र' प्रभु मधुर टेरे ॥२॥**

(२६ ब) इसी द्रुपद (सादरा) को क्रमिक पु. ६ पृ. ७५ राग–सिन्दूरा, ताल–झपताल में प्रकाशित किया गया है । किन्तु उनका स्थायी, अन्तरा ही दिया है । जिसका पाठ ठीक है, किन्तु पुष्टि–सेवाक्रम प्रणाली इस पद को 'खट' राग में ही गाने की प्राचीन परंपरा है । यह चीज सिन्दूरा-राग में और केवल स्थायी–अन्तरा में ही पं. भातखंडेजी को किस घराने से प्राप्त हुई होगी, यह अज्ञात है ।

(२७) भातखंडे क्रमिक भाग ६ (पृष्ठ–२८५, आवृत्ति–१ ई. स. १९३७) में 'राग-आभोगी, ताल–झपताल' में तथा क्रमिक पु. भाग–४ के (पृ.३६६, अवृत्ति–३, सन् १९३९) प्रकाशन में 'राग–बहार' में छपा हुआ निम्न लिखित द्रुपद (सादरा) का पाठ इस प्रकार है:––

स्थायी– **जयति शिरि राधिके, सकल सुख साधिके,**
तरुणि मणि नित्य नौतन किशोरी ।

अंतरा– **कृष्ण नव नील घन, रूप की चातकी,**
कृष्ण मुख-हिमकिरण की चकोरी ॥

क्रमिक पु. ६ एवं ४ में छपे उक्त द्रुपद का केवल स्थायी-अन्तरा ही प्रकाशित है । किन्तु हवेली-संगीत के संग्रहों में इनका संपूर्ण पाठ प्राप्त होता है । पुष्टिमार्गीय सेवा-क्रम में यह द्रुपद राग–रामकली-चर्चरी ताल (झपताल) में प्राय: मंगला के समय गाने की प्रथा आज कल है । 'गदाधरजी' रचित चार तुकों का यह पद सम्प्रदाय में निम्न लिखित शब्दों में सुप्रसिद्ध है–

स्थायी–**जयति श्री राधिके सकल सुख-साधिके,**
तरुणि मणि नित्य नौतन किशोरी ।

अंतरा–**कृष्ण तन नील घन रूपकी चातकी,**
कृष्ण मुख हिम किरण की चकोरी ॥१॥

संचारी–**कृष्ण दृग भंग विश्राम हित पद्मिनी,**
कृष्ण दृग मृगज बंधन सुडोरी ॥

आभोग–**कृष्ण अनुराग मकरंद की मधुकरी,**
कृष्ण गुनगान रस-सिन्धु बोरी ॥२॥

संचारी–**परम अद्भुत अलौकिक मेरी गति,**
लख मनसि सांवरे रंग अंग गोरी ॥

आभोग–**और आश्चर्य मैं कहूं न देख्यो सुन्यौ,**
चतुर चौसठ-कला तदपि मोरी ॥३॥"

संचारी–**विमुख परि चित्त में चित्त याको सदा,**
करत निज नाह की चित्त चोरी ॥

आभोग–**प्रकृत यह "गदाधर" कहत कैसे बनैं,**
अमित महिमा इते बुद्धि थोरी ॥४॥

(२८) क्रमिक हि. सं. पु. भाग ६, पृष्ठ-२७२ (आवृत्ति १ सन् १९३७) राग-मीरां की मल्हार, ताल-चौताल में प्रकाशित द्रुपद का शब्द-पाठ देखिए:–

स्थायी–**तुम घनसे घन गरजे,**
गरज गरज कहा अत जाय बरजे हो ।

अंतरा–**कहूं घाम कहूं छाह बतावत,**
कहू लागत ओसरे हो ॥

यही द्रुपद "मारिफुन्नगमात" में स्थायी, अन्तरा, संचारी आभोग सहित राग-मीराबाई की मल्हार में भी प्रकाशित हुआ है । गायक का नाम "रजाहुसेनखां लखनऊ" छपा हुआ है अतः उन्हीं से प्राप्त इस द्रुपद का पाठ* निम्न प्रकार से पाया जाता है ।‡

स्थायी–**तुम घनते घन गरजे ।**
गरज-गरज कहीं अन्त जाय बरसे हो ।

अंतरा–**कहूं घाम कहूं छांह बनावत,**
कहूं लागत झरसे हो ॥१॥

** "मारिफुन्नगमात" दूसरा-भाग हिन्दी-प्रति सन् १९५२ पृ-१९४*

‡ फिरोज फ्रामजी की पुस्तक में भी इसी राग में यही पाठ छपा हुआ है ।

संचारी–**झूठी बातें करो ना पती जी,**
औरन के पग परसे हो ।

आभोग–**“लछीराम” तुम हो बहुनायक,**
सब बातन सरसे हो ॥२॥

क्रमिक पुस्तक ६ तथा मारिफुन्नगमात में दिये हुए उपर्युक्त दोनों पाठ शुद्ध नहीं हैं । दूसरे पाठ के आभोग में रचनाकार का नाम भी मिलता-जुलता लगा दिया प्रतीत होता है । वास्तव में यह द्रुपद पुष्टिमार्गीय संगीत-प्रणाली का प्राचीन पद-गान है । मल्हार राग की खंडिता के पद-गान में इनका समावेश किया गया है । सम्प्रदाय के लिखित पद-संग्रहों में इनके दो पाठ प्राप्त होते हैं जो निम्न प्रकार से हैं:–

(१) कांकरोली (नाथद्वारा) के कीर्तनकारों की लिखित पोथी से प्राप्त पाठ––

स्थायी–**तुम घनसे घनस्याम,* गरज-गरज कहूं अनत जाय बरसे हो ।**
अंतरा–**कहूं बादर कहूं नेह जनावत, कहूं लावत झरसे हो**
संचारी–**अेकन कों नैन सेंन एकनसों मीठे बैंन,**
एकन पें जाय तुम पग परसे हो ॥
आभोग–**“घोंघी” के प्रभु तुम बहु नायक,**
सब बालन सरसे हो ॥२।

(२) पुष्टिमार्ग में षष्ठ-पीठ ‘सुरत” का भी माना जाता है, वहां की कीर्तन-प्रणाली संग्रह से प्राप्त पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी–**तुम घनसे घनस्याम मनोहर,**
गरज-गरज अनत बरसे हो ॥

अंतरा–**उमड घुमड में नेह जनावत,**
कहूं लावत सरसे हो ॥१॥

संचारी–**झूठी सांची हमही मिलावत,**
औरन पैं जाय तुम पग परसे हो ॥

आभोग–**“घोंघी” के प्रभु तुम बहु लायक,**
सब बातन सरसे हो ॥२॥

उपर्युक्त दोनों पाठ ठीक हैं, परन्तु इस लेखक को प्रथम का पाठ विशेष मान्य है ।

---

* पाठान्तर घनस्याम मनोहर ।

(२९) भा. क्र. पु. ६ पृष्ठ ६७ (आवृत्ति पहिली) राग 'ललितागौरी की धमार निम्न लिखित शब्दों में प्रसिद्ध हुई है ।

स्थायी– **ए मुरलीवाले सांवरे नेक मारग देहो बताय रे ।**
अंतरा– **ढूंढ फिरी सौंकेत संकल बन, हूं अबला कित जाऊं रे ।।**

यही धमार "मारिफुन्नगमात" भाग-२ में निम्नलिखित शब्दों में प्राप्त होती है:–

होरी ललिता गोरी धमार

स्थायी–क्रमिक पु. ६ से समान है ।
अंतरा–**हूं तो अकेली, संग ना सहेली, अबला कित जाय ।।**

उपर्युक्त धमार को "होरी" की संज्ञा दी गई है, किन्तु यह धमार होरी की नहीं है । सम्प्रदाय में प्रायः श्रीकृष्ण की होरीलीलायुक्त सभी पदों को धमार संज्ञा से संबोधन किया जाता है । परन्तु होरी के अतिरिक्त नित्य और नैमित्तिक आदि सेवाक्रम के पदों में कई पद धमार ताल में गाये जाते हैं । इस धमार में होरी की भावना नहीं है, 'सांझी' (फूल-बीनत)-लीला की भावना होने से सम्प्रदाय के संग्रहों में 'सांझी' के पद में समावेश होता है । भाद्रपद शुक्ल पूर्णिमा से अमावस्या तक सायं-सेवा के भोग-संध्यार्ति के दर्शन में ये पद गाये जाते हैं । सम्प्रदाय के अग्रगण्य (पुराने) कीर्तनकारों से हमने यह धमार राग-ललिता गौरी के स्वरों से मिलते-जुलते स्वरों में ही सुनी हुई है । "भगवान हित रामराय" की छाब के इस पद-कीर्तन का सम्पूर्ण पाठ सम्प्रदाय के संग्रहों में इस प्रकार है:–

स्थायी–(ए) **मुरली वारे सांवरे नेंक मारग मोहि बताऊ रे ।।**
अंतरा–**फिरौं अकेली संग न सहेली,**
कित नंदीसुर गांउ रे ।।१।।

संचारी–**भूलि परी संकेत सघन बन, हों अबला कित जाऊं रे ।।**
आभोग–**मृगनैनी के बचन सुनत ही, आइ मिले तिंहि ठाउं रे ।।**
संचारी–**लिये लगाय अंक भरि भेटे, भलो बन्यो है दाउं रे ।।**
आभोग–(२) **कहे भगवान हित 'रामराय' प्रभु**
राधा-रमन जाको नाऊं रे ।।३।।

(३०) भातखंडे क्रमिक पु. ३ देश-राग का द्रुपद "ए री सखी सावन" जो प्रसिद्ध हुआ है, यही द्रुपद मारिफुन्नगमात" भाग-२ में (पृ. १९७) नवाब "छम्मन' साहेब से प्राप्त देस राग में ही छपा हुआ है । दोनों में इनका स्थायी अन्तरा ही पाया जाता है । जिनके शब्द निम्न प्रकार से हैं:–

स्थायी–**एरि सखी सावन आयो, बिरहा अगम मोपैं,**
कल ना परत प्रान प्यारे बिन ।

अंतरा–**चहूं ओर तें बादल उमड घुमड आवैं (छायो)**
छतियां उमगी कान्ह कारे बिन ।।१।।

इस द्रुपद के संचारी-आभोग भी आजकल संगीतकारों एवं गायकों को अज्ञात से ही रहे हैं । सम्प्रदाय की कतिपय हस्तलिखित पोथियों (कीर्तन-संग्रह) में ही यह द्रुपद दृष्टिगत होता है। राग-सोरठ या मल्हार के पदों में इनका समावेश किया गया है । वर्षा-आगमन के दिनों में सम्प्रदाय में गाने की प्रथा समुचित है । यह अष्टछाप के महान् भक्त "सूर" की रचना है, पाठ इस प्रकार प्राप्त होता है:–

स्थायी–**एरी सखी सावन आयो, बरखा रितु आगम,**
नैना तो चुवत प्रान प्यारे बिनु ।।

अंतरा–**आज की अंधेरी रैन, बिजुरी सी चमकत,**
छतियां उमगी कान्ह कारे बिनु ।।१।।

संचारी–**दादुर मोर पपैया बोले, कोकिल की कूहुक**
सुनि छांडि हु न मारे बिनु ।।

आभोग–**इतनी अरज मेरे "सूर" के प्रभु सों,**
घायल को कल ना पुकारे बिनु ।।२।।

(३१) मारिफुन्नगमात, भाग-२, चीज नं. ५८ (पृष्ठ-७५) देखिए । "मोहम्मद अली खां" गायक से प्राप्त, शंकराभरण-चौताल में छपा हुआ निम्नलिखित द्रुपद की चीज के बोल इस प्रकार हैं:–

स्थायी–**आये जी कैसे आवन पाये,**
भले ही आये मेरे नवल लाल ।

अंतरा–**तुम हो चतुर सुजान, बूझत सब गुन निधान,**
महाज्ञान मूरत हो अति रसाल ।।

संचारी–**हमसों अवध बही अन्त विरम रहे,**
ऐसी न कीजै दीन दयाल ।

आभोग–**"तानसेन" के प्रभु तुम हो बहुनायक,**
दीजै दरस कीजै निहाल ।।

उपर्युक्त द्रुपद के स्थायी, अन्तरा और आभोग के शब्दों में कोई विशेष अन्तर नहीं पाया जाता, किन्तु संचारी के चारों आवर्तनों के शब्दों को (प्राप्त न होने पर) बदल दिया गया है या पाठान्तर है । जब तक प्राचीन हस्तलिखित

ग्रन्थ में उपर्युक्त पाठानुसार संचारी प्राप्त न हो तब तक हमारे संशोधनानुसार ई. १७४६* की लिखित प्रति का निम्नलिखित पाठ ही मूल एवं शुद्ध कहा जायगा। लिखित संग्रहों में खंडिता (नायिका) के पदों में यह द्रुपद दृष्टिगोचर होता है, जो विशेषतः राग-परज, चौताल में प्रातःकाल मंगला-समय गाया जाता है। तानसेन के वैष्णव होने के पश्चात् के सभी पदों में "तानसेन के प्रभु" की छाप ही प्राप्त होती है। ये बहुत से पद पुष्टिमार्गीय सेवा-प्रणाली के कीर्तन-गान में ओत-प्रोत होकर अष्टछाप-परंपरा में पाये जाते हैं। ऊपर लिखित द्रुपद का प्राचीन पाठ इस प्रकार है।

राग-परज, ताल-चौताल

स्थायी–**आईये जु कैसे आवन पाये,**
भलेई आये मेरे नवल लाल ।।

अन्तरा–**तुम हो अति सुजान बूझत गुन** निधान,**
महाज्ञान मूरत छबि रति रसाल ।।१।।

संचारी–**ज्यों ज्यों इन नैनन देखन‡ न पाऊं,**
त्यों त्यों मन‡‡ होत बिहाल ।।

आभोग–**"तानसेन" के प्रभु तुम बहुनायक,**
दीजिये दरस कीजिये निहाल ।।२।।

(३२) मारिफुन्नगमात-भाग-२ पृ. ९६ (आवृत्ति सन् १९५२) में राग जैजैवन्ती का द्रुपद चौताल में निम्न शब्दों में छपा हुआ है। जो गायक-मोहमद अलीखां से प्राप्त किया हुआ है:–

स्थायी–**रंग रहे लाल उनही तिरियन संग,**
निरखत छबि ढंग परत, और-और ।।

अंतरा–**ले दरपन मुख देखो निहार श्याम,**
अधरन अंजन लाग ठौर-ठौर ।।

संचारी–**हमसों अवधि बदी औरन सों रीत मानी ।**

आभोग–**जाउजी जाउजी जहां सारी रैन जागे श्याम,**
अब काहे आवत प्रातःकाल दौर-दौर ।।

** कांकरोली से प्राप्त ।*

*** पाठान्तर–सब गुन ‡ देखन पाऊं ‡‡ रहत बिहाल बाल*

०० संगीत कलाधर ग्रंथ में राग परज में ही मिलता है । लिखित नित्य पोथी, कांकरोली में स्वरलिपि दी गई है, जिसका पाठ मारिफुन्नगमात के पाठ से मिलता है ।

मुस्लिम घरानाओं के गायकों में सम्प्रदाय का यह द्रुपद भी किसी न किसी प्रकार पहुंच गया । स्थायी में खास अंतर नहीं है । अन्तरा में पाठान्तर है । संचारी अपूर्ण (केवल दो आवर्तन की) है । आभोग में सूरदास की छाप की जगह अन्य शब्द लगा दिये हैं । सम्प्रदाय में यह द्रुपद राग-अल्हैया विलावल में गाया जाता है । सूरदासजी की यह रचना शृंगार के दर्शन में श्रीजी को दर्पण दिखाने के समय गाने की प्रथा है। 'खंडिता' के पदों में इस द्रुपद का समावेश किया गया है । पुष्टि-सम्प्रदाय के ग्रन्थों में इसका शुद्ध पाठ निम्न प्रकार से दिया गया है:-

स्थायी–**माई, रंग रंगे* हो लाल उनही त्रियन संग,**
छबि देखियत ढंग परत कछु और-और ।।

अन्तरा–**लै दरपनθ देखिये जु प्यारे लाल,**
अधरन अंजन लग्यौ–ठौर-ठौर ।।१।।

संचारी–**मोसौं अवधि बदी, औरन सों रति मानी,**
प्रीत करत फिरत नई पौर-पौर ।।

आभोग–**जाओजी जाओजी तुम उनही में "सूर" प्रभु,**
काहे को आवत मेरे प्रात दौर-दौर ।।२।।

(३३)

मारिफुन्नगमात भाग ३ पृष्ठ ८ हिन्दी प्रथमावृत्ति (सन् १९२७) राग–देसकार, धमार–ताल में जो होरी प्रसिद्ध हुई है, इनके शब्द निम्न प्रकार से हैं:-

स्थायी– **प्रातकाल नंदलाल खेलत होरी ।**
अन्तरा– **आई आनंद भरी, ब्रज की गौरी ।।**
संचारी– **कंचन पिचकारी हाथ, और गुलाल झोरी ।**
आभोग– **सीस पाग छटक रही, केसर रंग बोरी ।।**

इस धमार के मूल–गायक व रचियता 'सूरदास मदनमोहन' हैं। उपर्युक्त पाठ में अंतरा से आभोग का क्रम क्रमशः नहीं है। हवेली संगीत प्रणाली में यह धमार राग-भैरव में प्राप्त होती है; जो मंगला के दर्शन–समय गाई जाती है। होरी दंडारोपण '(माघ शुक्ल पूर्णिमा) से होरी तक गाये जाने वाले पदों में इसका समावेश है। कविता का पाठ सम्प्रदाय के ग्रन्थों में निम्न प्रकार से पाया जाता है:—

** पाठान्तर–रहे हो । θ मुख देखिये जु ।*

स्थायी– **प्रातसमें नंदलाल खेलत हैं होरी ।**
अन्तरा– **सीस पाग झुकि रही, केसर रंग बोरी ।।१।।**
संचारी– **सब नारी जुरिकें आई, नंदजु की पौरी ।।२।।**
आभोग– [*] **सूरदास मदनमोहन भली बनी जोरी ।।३।।**

(३४)

मारिफुन्नगमात भाग[‡] २ तथा भाग[θ] ३ में राग–जैजैवंती की धमार प्रकाशित हुई है। गायक–मोहम्मद अलीखां द्वारा प्राप्त हुई इस धमार का भाग २ में स्थायी और अंतरा ही दिया है, तथा भाग ३ में संचारी-अभोग सहित का पाठ इस प्रकार है:—

स्थायी– **भली भई ब्रज होरी, घर आये घनश्याम ।**
अन्तरा– **लोग कहें टुनवा पढ़ डारो, ये राधे को काम ।।**
संचारी– **धन तेरो भाग सोहाग भावती, और ना दूजी वाम ।**
आभोग– **कृष्णजीवन की इच्छा पूजि, ये बेग ही श्याम ।।**

सम्प्रदाय के 'बसंत–धमार' संग्रहों में यह धमार राग-केदार में प्रकाशित हुई है। शयन-दर्शन के समय होरी के दिनों में इसके गाने की प्रथा सुप्रसिद्ध है। अनुमानत: यह धमार भी मुस्लिम गायकों के पास कर्णोपकर्ण द्वारा पहुँचने से पाठ में कुछ परिवर्तन हो गया है। प्राप्त पाठ इस प्रकार है:—

स्थायी– **भली भई ब्रज होरी आई, घर आये घनश्याम ।**
अंतरा– **चोवा चंदन और अरगजा, वे राधा के काम ।।१।।**
संचारी– **धन तेरो भाग सुहण लाडिली, और न दूजी वाम ।।**
आभोग– **'कृष्णजीवन लछीराम' के प्रभुसों, ज्यों सीता मिलि राम ।।२।।**

(३५)

मारिफुन्नममात, भाग ३ (पृष्ठ-५७) में राग-शहाना की होरी-धमार का पाठ निम्न प्रकार से पाया जाता है:—

स्थायी– **तू जिन बोलरी देने दे वाहू गारी ।**
अंतरा– **वे तो लबारी झबारी जगत के, तुमहो सुलछन कारी ।।१।।**
संचारी– **जो वाके मन में सोही पाख रही हूं, कहा करी हूं लाज की मारी ।।**

---

[*] पृष्ठ–१०१ [‡] पृष्ठ–२२

[θ] वल्लभ गोपाल निरख विहसत मुख भोरी। (संदिग्ध)

उपर्युक्त धमार के पाठ में भी कहीं-कहीं परिवर्तन हो चुका है। “कृष्णजीवन लछीराम’ की इस रचना को होरी के दिनों में राग काफी में गाने की प्रथा सम्प्रदाय में सुप्रसिद्ध है। जिनका शुद्ध पाठ सम्प्रदाय के संग्रहों में इस–प्रकार प्राप्त होता है:—

स्थायी–**सखी, तू जिन बोलरी, देन दै वाहिकों गारी ।।**
अंतरा– **एतो लबार जिवार, जगत को हम चतुर सुलच्छन नागर नारी ।।१।।**
संचारी–**वाके मुख आवे सो गावै, हम न कहें कछु लाज की मारी ।।**
आभोग– **या होरी में कौन बिगोयो, ‘कृष्णजीवन लछीराम’ जंजारी ।।२।।**

(३६)

मारिफुन्नगमात–भाग–२ (पृष्ठ–६८) राग–नट, ताल–चौताल (गायक–मोहम्मद अलीखां) का द्रुपद स्थायी–अंतरा में ही छपा हुआ है। पाठ निम्न प्रकार से है।

स्थायी– **कैसे जाऊं बीच । जमना बाढी जमना बाढी ।।**
अंतरा– **ए ले पार कान्ह बसिया बजावे, वे ले पार हम ठाड़ी ।।**

पुष्टिमार्गीय सेवा-क्रम में यह पद उष्णकाल में जब यमुनाजी के पद गाये जाते हैं, तब भोग–समय राग-नट में ही गाया जाता है। ७ मात्रा (अर्ध-आडा-चौताल) के ताल में द्रुपद अंग से गाने की प्रथा है। इनकी बंदिश चौताल में सुसंगत नहीं है। गायक मोहम्मद अलीखां ने शब्दों में मात्राएँ बढ़ा कर तथा ‘जमना बाढ़ी-जमना बाढ़ी’ दो बार ले करके भी चौताल में गाना क्यों पसंद किया होगा–इसका कारण अज्ञात है।

सम्पदाय के लिखित संग्रह में ‘तानसेन’ की छाप है, और सम्पूर्ण पाठ इस प्रकार है:—

संचारी– **कहारी कहौं बीच जमुना बाढी ।**
अंतरा– **याही पार कान्ह मुरली बजावत, वाही पार हम ठाड़ी ।।१।।**
संचारी– **कांधे कंमरिया हाथ लकुटिया, रहत सदाई आडो ।।**
आभोग– **‘तानसेन’ के प्रभु बहुनायक, निकसि करारें ठाडो ।।२।।**

‘द्रुपद–स्वरलिपि’ ग्रन्थ (प्रकाशन–१९२९) में पृष्ठ–३४ पर प्रकाशित किया हुआ राग–हिन्डोला, चौताल (द्रुपद) का गीत पाठ निम्न प्रकार से है—

स्थायी–**यशोमति दधि मथन कर बैठे वीरधाम,**
ओरि ठाड़े हरि यस निहारे सुन्दर छबि राजे ।।१।।
अंतरा–**चितवन चित रहि लोभात शोभा कछु कहि न जात,**

संचारी—**जननी कहे नाचो बाला देऊंगी नवनीतनुत्ता,**
रुनुन रुनुन झुनुन झुनुन पायनि बाजनि बाजे ।।३।।
आभोग—**गावत गुण 'सूरदास' सुख बढ़त भूम आकाश,**
नाचत त्रिलोकनाथ माखन काजे ।।४।।

उपर्युक्त पाठ में कहीं-कहीं अशुद्धियां स्पष्ट रूप में दृष्टिगत होती हैं। अष्टछाप के 'सूर' द्वारा रचित इस प्राचीन द्रुपद का पुष्टिमार्गीय कीर्तन प्रणाली में 'दधिमथन के पद' राग-बिलावल में समावेश किया हुआ है । 'दधिमथन के पद' ग्वाल के समय जब घैयां का भोग आता है तब गाये जाते हैं। सम्प्रदाय-प्रसिद्ध इस प्राचीन द्रुपद का शुद्ध पाठ संग्रहों में निम्न प्रकार से प्राप्त होता है:—

स्थायी—**जसोमति दधि-मथन करति बैठी वर-धाम अजर,**
ठाड़े हरि हसत नन्हीं दतियत छबि छाजे ।।
अंतरा—**चितवनि चित रह्यो लुभाय, सोभा कछु कही न जाय,**
मुनिन के मन हरन को मन-मोहिनी दल साजें ।।११।।
संचारी—**जननी कहै नाचो लाल देहुंगी नवनीत लोंदा,**
आभोग—**गावत गुन सूरदास सुख छायो भुव-अकाश,**
नाचत त्रय-लोक-नाथ माखन के काजें ।।२।।

(३८)

द्रुपद-स्वर लिपि पृष्ठ-१३१ में 'पूरवी' राग का द्रुपद निम्न पाठ से छपा हुआ है:—

स्थायी—**धर टेडी पाग हि चन्द्रिका और टेडो त्रिभंगी लाल ।**
अंतरा—**कुंडल कि छबि मानों कोटि रवि उदय होत और राजत बनमाल ।**
संचारी—**श्यामरो बदन पर पीत पट ओढना मुख मुरली बाजत मधुर रसाल ।**
आभोग—**श्रीमत वल्लभ बन तें आयो संग तिये ब्रज गोप बाल ।**

पूर्वी-चौताल का उपर्युक्त द्रुपद हवेली-संगीत का प्राचीन पद है। यह अष्टछाप के सुप्रसिद्ध वाग्गेयकार 'नन्ददास' जी की रचना है। सम्प्रदाय में राग-पूर्वी चौताल में गाने की प्रथा सम्प्रदायेतर गायकों में भी दृष्टि-गोचर होती है, किन्तु पाठ ठीक नहीं है। अंतिम पंक्ति का पूर्व भाग अन्य ही जोड़ दिया है। संभव है उन्हें ठीक पाठ प्राप्त हुआ न हो। पुष्टिमार्गीय कीर्तन-प्रणाली में यह द्रुपद सायं भोग-संध्या आरती के दर्शन में (श्रीजीको पाग-चंद्रिका का शृंगार जिस रोज किया जाता है उस रोज) गाया जाता है। प्राचीन पाठ इस प्रकार है:—

स्थायी--**धरें टेढी पाग* चंद्रिका टेढी त्रिभंगी लाल।।**
अंतरा--**कुंडन किरन मानों कोटि रवि उदय होत, उर राजत बनमाल।।१।।**
संचारी--**सांवरे बरन† पीताम्बर ओढ़े, ‡मुरली बजावत तान रसाल।।**
आभोग--**नंददास बनतें ब्रज आवत संग सखाθ लिये बाल।।।**

(३९)

प्रो. श्री फिरोजफामजी (पूना) की पुस्तक में पृष्ठ-९१ पर राग जेत (ओडव प्रकार) चौताल का द्रुपद केवल स्थायी अंतरा में ही निम्न प्रकार से प्रकाशित हुआ है--

स्थायी--**जाकों बेद रटत ब्रह्मा रटत शेष रटत शंभु रटत,**
नारद शुक व्यास रटत पावत नहीं पार
अन्तरा--**ध्रुव जन प्रहलाद रटत कुंती के कुंवर रटत,**
द्रुपद की सुता रटत अनाथन प्रतिपाल।

यह द्रुपद पुष्टिमार्गीय संगीत में राग-सारंग, चौताल में गाया जाता है। भगवन्माहात्म्य के पदों में इनका समावेश होता है। अष्टछाप के वाग्गेयकार श्री नन्ददासजी-रचित यह द्रुपद राजभोग-सम्मुख पुष्टिमार्गीय प्रणाली के अनुसार गाया जाता है। संचारी-आभोग सहित सम्पूर्ण पाठ इस प्रकार है:--

स्थायी--**(जाकों) बेद रटत ब्रह्मा रटत शंभु रटत सेस रटत,**
नारद सुक-व्यास रटत पावत नहीं पार।
अन्तरा--**ध्रुव-जन प्रहलाद रटत कुंती के कुंवर रटत,**
द्रुपद-सुता रटत नाथ अनाथन प्रतिपाल।।१।।
संचारी--**गनिका गज गीध रटत, गौतम की नारि रटत,**
राजन की रमनी रटत, सुतन दे दे प्यार।
आभोग--**'नंददास' श्रीगोपाल गिरिवरधर रूप रसाल,**
जसोदा को कुंवर प्यारी राधा उर-हार।।२।।

(४०)

'संगीत' मासिक के द्रुपदांक पृष्ठ ८५ पर छपा हुआ राग वृन्दावनी सारंग, चौताल का निम्नांकित द्रुपद संपूर्ण प्रकाशित हुआ है, किन्तु उसके प्रारंभ में शब्दकार 'वल्लभाचार्य' लिखा है जो संपादक की साम्प्रदायिक अज्ञानता है। 'वल्लभ' छाप

पाठान्तर : * टेढी चंद्रिका

पाठान्तर : ↑ सुन्दर बदन।

‡ बजावत मुरली मधुर रसाल θ ब्रजबाल

श्रीमद्वल्लभाचायजी के पौत्र श्री गोकुलनाथजीकी है । श्री वल्लभाचार्यजी ने ब्रजभाषा में कोई पद रचना नहीं की है। इस छपे हुए पाठ में संचारी का अंतिम और आभोग के तृतीय आवर्तन का पाठ भी कुछ भिन्न है। बाकी सभी पाठ ठीक होने से यहां सम्प्रदाय-प्रसिद्ध पाठ को ही निम्न प्रकार दिया गया है:—

राग–सारंग, ताल-चौताल

स्थायी—**बैठे हरि राधे संग कुंजभवन अपने रंग,**
कर मुरली अधर धरें सारंग मुख गाई री ॥

अंतरा—**मोहन अति ही सुजान परम चतुर गुन निधान,**
जानि-बूझि एक तान चूक के बजाई री ॥१॥

संचारी—**प्यारी जब गह्यो बीन सकल-कला गुन-प्रवीण,**
अति नवीन रूप सहित वही तान सुनाई री ॥

आभोग—**'वल्लभ' गिरिधरनलाल रीझि दई अंकमाल,**
कहत भले-भले लाल सुंदर सुखदाई री ॥२॥

उपर्युक्त पाठानुसार पुष्टिमार्गीय प्रणाली में इस द्रुपद का 'कुंज के' पदों में समावेश किया गया है। होली पीछे चैत्र मास में कुंज के पद 'जब गाये जाते हैं तब यह पद भी राजभोग-दर्शन में गाया जाता है । इस पद में वल्लभ' छाप होने से रचियता 'श्रीगोकुलनाथजी' माने जायेंगे, तदापि हमारे संशोधन में एक लिखित पुस्तक में 'श्री विट्ठलगिरिधरनलाल' छाप भी प्राप्त हुई है, तदनुसार यह रचना 'गंगाबाई' की होना भी संभव है; जिन्होंने सैकड़ों पदों की रचना की है, जो संम्प्रदाय संगीत की परम्परा में सुप्रसिद्ध है।

(४१)

'सगीत-कलाधर' नामक गुजराती लिपि के सुप्रसिद्ध और विशाल ग्रन्थ के पृष्ठ ४२३ पर राग-जयजयवंती ताल झपक (झपताल) में छपे हुए निम्न द्रुपद का पाठ इस प्रकार है:—

स्थायी—**गोकुल की पनिहारी पनियां भरन चली,**
बड़े बड़े नैनन में फब रह्यो कजरा।

अंतरा—**पहनी तन सेत सारी अंग अंग छबि न्यारी,**
गोरे-गोरे भुजन में मोतिन को गजरा ॥

संचारी—**चलत सखी के संग मन में अति उमंग,**
कान्ह सों यों कह्यो कित हें जु डगरा।

आभोग—**नंददास प्रिया प्यारी बस कीने गिरिधारी,**
नैन की सैंन दे के सीस धर्यो गगरा ॥

यह द्रुपद अष्टछापी वाग्गेयकार श्री नंददासजी की रचना है। पुष्टि (हवेली) संगीत परंपरानुसार राग कुकभ बिलावल अथवा (अल्हैया) बिलावल चर्चरी (झपताल) में गाया जाता है। कोई क्वचित् चौताल में भी गाते हैं। पनघट के भाव के इस पद का पाठ सम्प्रदाय के संग्रहों में इस प्रकार पाया जाता है:—

स्थायी——**गोकुल की पनिहारी पनिया भरन चली,**
बड़े-बड़े नैनां तामें खुभि रह्यो कजरा।।

अंतरा——**पहिरे कसूंभी सारी अंग-अंग छबि भारी,**
गोरी-गोरी बहियन में मोतिन के गजरा।। ११।।

संचारी——**सखी संग लिये जात हँसि-हँसि बूझति बात,**
तनहूं की सुधि भूली सीस धरें गगरा।।

आभोग——**"नंददास" बलिहारी बीच मिले गिरिधारी,**
नैनन की सैननि में भूलि गई डगरा।।२।।

(४२)

गवैयों में पहुंचा हुआ निम्नलिखित द्रुपद भी 'संगीत कलाधर' ग्रन्थ राग-बसंत चौताल में लिपिबद्ध किया हुआ प्राप्त होता है । जिनका शब्द पाठ (पृष्ठ-५०३) इस प्रकार है—

स्थायी——**ऋतु बसंत तरु लसंत मन हसंत कामिनी,**
अभिरामिनी अंग-अंग रमत फाग री।।

अंतरा——**उड़त गुलाल लाल-लाल बाहर घर चादर,**
केसर कुमकुमा उड़न लागरी।।

संचारी——**गाम गाम धाम धाम डगरे दोऊ झगरें,**
दंपति अति सुख पावत खेलन को लाग री।।

आभोग——**अखियां दोउ अखियां तें निरख रही आंगन में,**
कब घर आवे मेरे पिव बड़े भाग री।।

अष्टछाप परम्परा में यह "ऋतु बसंत तरु लसंत मन हसंत" द्रुपद बसंत राग में ही गाया जाता है, किन्तु स्वर और ताल में भिन्नता है। हवेली संगीत में शुद्ध धैवत लगाया जाता है। (इस विषय की हम राग प्रकरण में चर्चा करने वाले हैं अतः यहां राग और ताल के नामोल्लेख ही करना चाहते हैं।) सम्प्रदाय में इसे (चर्चरी) झपताल में गाने की प्रथा दिखाई देती है । उपर्युक्त पाठ की स्थायी के शब्दों में खास कोई भिन्नता नहीं है । किन्तु तत्पश्चात् के पाठ में

परिवर्तन किया हुआ दृष्टिगोचर होता है। सम्प्रदाय के संग्रहों में यह पद 'विष्णुदास' की रचना में मिलता है। यह 'कृष्णदास' की रचना में भी प्राप्त होता, किन्तु उपर्युक्त पाठ से भिन्न है।

'डागुर-ब्रदर्स' राग खमाज घाट की दुर्गा का द्रुपद जो 'मानुस हों' चौताल में गाते हैं, यह द्रुपद पुष्टि-सम्प्रदाय के कवि 'रसखान' जी की रचना है जो कि सम्प्रदाय में निम्न प्रकार से सुप्रसिद्ध है:—

स्थायी—**मानुस हों तो वहीं रसखानि, बसों ब्रज गोंकुल गाँव के ग्वारनि।।**

अंतरा— **जो पसु हों तो कहा बस मेरो, चरौं नित नन्द की धेनु चरावनि।।१।।**

संचारी—**पाहन हों तो वहीं गिरि कों, जु धर्यो कर छत्र पुरंदर कारन।।**

आभोग—**जो खग हों तो बसेरो करों, मिलि कालिंदी कूल कदंब की डारनि।**

हवेली संगीत का ख्याल गायन में प्रचार

द्रुपद-धमार के अतिरिक्त ख्याल-गायन पर भी हवेली संगीत का गहरा प्रभाव पड़ा है। बहुत से ख्याल-गायकों ने हवेली संगीत के पदों को अपनाकर अपने-अपने ख्याल-घराने की बंदिशों में समावेश किया है। उन कलाकारों के लिये अपनी सूझ के आधार पर नई-नई बंदिशों में पदों को ख्याल की रचना बनाकर प्रचार में लाना सहज सुलभ था। उन्होंने राज्याश्रय द्वारा श्रोताओं पर अच्छा प्रभाव जमाया और द्रुपद-धमार गायकी के स्थान पर छोटे-बड़े ख्यालों के गायन से समाज को आकर्षित किया। यह कृत्य वास्तव में प्रशंसनीय था। यहां हम केवल परिवर्तित बंदिशों के संदर्भ में हवेली-संगीत परम्परा के आधार पर विचार करेंगे।

यह कहना समुचित होगा कि द्रुपद-धमार के उपरान्त भारतीय संगीत के ख्याल-घरानों की गायकी को भी समृद्ध और प्रभावशाली बनाने में हवेली-संगीत एवं वैष्णव-सम्प्रदाय की देन कम नहीं है, जिनमें अष्टछाप एवं अष्टछाप परंपरा के वाग्गेयकारों की रचनाओं का आश्रय उल्लेखनीय है। हवेली-संगीत परंपरा की द्रुपदांग गायकी के पद-कीर्तनों को ख्याल-बंदिश में गाने के लिए कहीं राग, कहीं ताल, कहीं राग और ताल तथा कहीं-कहीं शब्द रचना भी परिवर्तित कर दी गई है। इस सन्दर्भ में 'भातखंडे संगीत शास्त्र' का निम्नलिखित उदाहरण उपयोगी होगा।

प्रश्न—"यह आप क्या कह रहे हैं? मालूम होता है कि अधूरे गीत गाने वाले गायक भी मिल सकते हैं?"

उत्तरः—"हां, यह स्वीकार करना पड़ेगा कि आजकल इस प्रकार के गायक भी दिखाई देने लगे हैं। ये लोग घंटे-दो-घंटे तक चीखते रहेंगे और इतनी अवधि में लंगड़ी-लूली चार पांच रागों की चीजें गाने का प्रयत्न करेंगे, परन्तु मजा यह है कि उकता देने वाली पुनरुक्ति-युक्त तानबाजी करते हुये ये प्रत्येक चीज अधूरी रख देंगे। ये ऐसा क्यों करते हैं? इस प्रश्न का उत्तर अनेक प्रकार से दिया जा सकता है; जैसेः— उन्हें स्वतः उत्तम प्रकार की तालिम नहीं प्राप्त हुई होगी। समाज में गाते समय मन चाहे शब्दों को लेकर वे गाते होंगे। किसी प्राचीन और प्रसिद्ध चीज को रूपान्तरित करते हुए गाने में उन्हें यह भी भय रहता होगा कि कोई हमारी-चीज सुनकर नहीं उड़ा लें या अन्तरे में भिन्नता संभालना नहीं आता होगा, इत्यादि अनेक कारण अधूरी चीज गाने के हो सकते हैं।

"मैंने यही चीज अमुक खां के मुंह से अमुक राग में सुनी थी। परन्तु इसने तो अन्तरा ही नहीं गाया।"

(भातखंडे संगीत शास्त्र भाग-२, पृ. २९२)

इस दृष्टि को सामने रखकर यहाँ ख्याल-गायन की प्रचलित चीजों में से कुछ विलंबित तथा द्रुत-ख्यालों का संक्षिप्त विवेचन सहित उल्लेख किया जा रहा है।

(१)

भातखंडे * क्रमिक भाग-२ में अल्हैया-बिलावल ताल-त्रिताल में छपी हुई निम्न चीज का पाठ देखिए:—

स्थायी– **लाडली लाल फूले आवत, लाडली लाल फूले ।**
अन्तरा– **कुंज केलि नवरंग बिहारी, सुरत हिंडोरे झूले ।।**

इस चीज को हवेली-संगीत परंपरा में 'धमार' ताल में गाने की प्रथा है। श्रावण मास में हिंडोला के दिनों में यह पद मंगला-समय गाया जाता है। राग में परिवर्तन नहीं हुआ है, किन्तु धमार ताल के इस पद को 'मध्यलय-त्रिताल' का ख्याल बना कर प्रकाशित किया गया है। 'विट्ठल विपुन' की छाप के इस पद का संचारी आभोग सहित संपूर्ण पाठ इस प्रकार है:—

स्थायी– **आवत लाल लाडिली फूलें ।।**
अन्तरा– **कुंज केलि नवरंग बिहारी, सुरत हिंडोरे झूलें ।।१।।**

संचारी– **निसि जागे अलसात रगमगे, पट पलटें गति भूलें ।।**
आभोग– **'विट्ठल बिपुन' बिनोद बिहारी, दुरि देखत द्रुम मूलें ।।२।।**

(२)

भा. क्रमिक पु. २ (पृ. ७९ सन् १९२९) मध्यलय-त्रिताल की चीज के स्थायी-अन्तरा का निम्न पाठ देखिए:—

राग-अल्हैया बिलावल, त्रिताल (मध्यलय)

स्थायी– **बल बल जाऊं मधुर सुर गावो, अबकी बेर**
मेरे कुंवर कन्हैया नंद ही नाच दिखावो ।।

अन्तरा– **तारी दे दे अपने करकी, परम प्रीत उपजाओ ।**
आन जौंत धुन सुन डरपत कत मो भुज कंठ लगावो ।।

---

* पृ. ७८ (आवृत्ति-३ ई.स. १९२९)

अष्टछाप-परंपरा में सूरस्याम छाप का द्रुपद अंग की गायकी का उपर्युक्त पद ख्याल की बंदिश में प्रसिद्ध किया गया है। इस पद का सम्प्रदाय के ग्रन्थों में 'बाललीला के पद, राग-बिलावल' में समावेश किया गया है। यह श्रीकृष्ण जयन्ती के बाद शृंगार-समय गाया जाता है। पाठ में कोई अन्तर नहीं है। इस चीज का पूर्ण पाठ इस प्रकार है:—

स्थायी– **बलि-बलि जाउं मधुर सुर गाओ ।**
अन्तरा– **अबकी बेर मेरे कुंवर कन्हैया, नंद ही नाच दिखाओ ॥१॥**
संचारी– **तारी दे दे अपने करकी, परम प्रीति उपजाओ ।**
अन्तरा२– **आनि अंत धुनि सुनि डरपत कित, मो भुज कंठ लगाओ ॥२॥**
संचारी– **नाचहुं नेंक जाउं बलि तेरी, मेरी साध पुराओ ॥**
आभोग– **रतन जटित किंकिनी पग नूपूर, अपुने रंग बजाओ ॥३॥**
संचारी– **कनक खंभ प्रतिबंबित सिसु इक, लोंनी ताहि खवाओ ॥**
आभोग२– **'सूरस्याम' उर अंतर तें कहुं, टारें नेकु न भाओ ॥४॥**

(३)

भा० हिं० सं० प० क्रमिक भाग-२ (पृष्ठ-३४ आवृत्ति सन् १९२९) राग-यमन, ताल झूमरा में प्रकाशित किया हुआ विलंबित ख्याल के स्थायी अन्तरा का पाठ इस प्रकार है:-

स्थायी– **बन रे बलैयां लूंगी आज सुहाग की रात, नवेला वर पाया**
अन्तरा– **चौंद्र बदन पर निपटकी लोचन चमकत लरीयां**
बना बनी के मुख तंबोल बीरी बनाय अनगीन दूंगी ।

वास्तव में उपर्युक्त ख्याल की रचना हवेली-संगीत के निम्न पद में से की गई है। स्थायी के शब्दों में खास अन्तर नहीं है। किन्तु अन्तरा के पाठ में परिवर्तन किया गया है, जो अर्थ-भाव की दृष्टि से ठीक नहीं कहा जा सकता। सम्प्रदाय में 'श्रीजी' को जब 'सेहरा' का शृंगार धराया जाता है तब शयन के दर्शन में द्रुपद अंग से गाये जाने वाले इस पद का पूर्ण पाठ इस प्रकार है:-

राग–इमन

स्थायी– आजु सुहाग की राति* सुघर वर पायो
बनारे बलैयां लेहौं ॥
अन्तरा– तन मन धन नौछावर करिहौं,
अधर तंबोल बीरी** अनगिन देहौं ॥१॥

पाठान्तर– * रैनि, ** मुख

संचारी– **बागो लाल सुनहरी सोहै, मोर मुकुट को मोर धरें हो**
आभोग– **'कृष्णजीवन लछीराम' के प्रभु सों, मिलिकें रति-रस बढ़ैहों ।।२।।**

(४)

भा० हिं० सं० प० भाग-२ (पृष्ठ-४०) राग-यमन, ताल त्रिताल में छपे हुए विलंबित ख्याल का पाठ भी देखिये:–

स्थायी– **पलखन सें मग झारूं रे भाई, कब घर आवे मोरा प्यारा ।**
अन्तरा– **तपत बुझाऊं, तन मन धन उन पर वाऊं ।।**

यह चीज भी पुष्टिमार्गीय-संगीत में 'रसिक प्रीतम'' की छाप का पद है। जिनमें से कुछ शब्दों को घटा-बढ़ा कर 'अन्तरा' जोड़ दिया, यह मालूम होता है। संचारी व आभोग सहित यह पद इसी राग में चौदह मात्रा की झूमरा या आड चौताल में ताल में सम्प्रदाय के वृद्ध कीर्तनकारों से सुना हुआ है, पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी– **माई पलकन सौं मग झारूंगी ।**
अन्तरा– **या मगमें आवत मेरो पिया, तन मन जोबन वारूंगी ।।१।।**
संचारी– **सेज संवारो चरन तलासौं, और मधुरे सुर गाऊंगी ।**
आभोग– **'रसिक प्रीतम' पिय अबकें मिलें तो, हँसि हँसि कंठ लगाऊंगी ।।२।।**

(५)

हिं० सं० प० क्रमिक भाग-२ (पृष्ठ-३५५) प्रकाशन में राग आसावरी ताल-त्रिताल (मध्यलय) का ख्याल स्थायी-अन्तरा में इस प्रकार प्रकाशित किया गया है:–

स्थायी– **मेरी अखीयन के भूखन गिरिधारी,**
एरि सखि बल-बल जाऊँ छबीली छब पर अति आनंद सुखकारी ।
अन्तरा– **परम उदार चतुर चिन्तामणि, दरस परस दुख हारी,**
अतुल* सुभाव तनक तुलसीदल, मानस सेवा भारी ।।

सम्प्रदाय में शीतकाल की ऋतु में राजभोग के दर्शन-समय राग-असावरी में ही यह पद गाया जाता है। 'हिलग के पद' शीर्षक में संगृहीत पदों के संग्रह में इनका समावेश किया गया है।

अष्टछापी संगीतकार छीतस्वामी की रचना है। इसका पूर्ण पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी– **मेरी अखियन के भूषन गिरिधारी ।।**
अन्तरा– **बलि-बलि जाऊं छबीली छबि पर, अति आनंद सुखकारी ।।१।।**

** यहाँ 'सुभाव' के स्थान पर मूल पाठ में 'प्रताप' शब्द है, शेष पाठ मूल के समान है।*

संचारी– परम उदार चतुर चिन्तामनि, दरस परस दुखहारी ।।
आभोग– अतुल प्रताप तनिक तुलसीदल, मानत सेवा भारी ।।२।।
संचारी२ –कहा बरनों गुन-गाथ नाथ के, श्री विट्ठल हृदय बिहारी ।।
आभोग२ –'छीतस्वामी' गिरिधरन बिसद जस, गावत गोकुल नारी ।।३।।

(६)

क्रमिक भाग-३ में प्रकाशित किया हुआ[*] राग-केदार, ताल त्रिताल का विलंबित ख्याल-स्थायी-अन्तरे में निम्न शब्दों में पाया जाता है ।:–

स्थायी– बनठन कांहां जो चले ऐसी को मन भावन सांवरे सलोने कन्हाई ।
अन्तरा– दूजे कैसो चौंद्रमा नीको ही लागत, छुप छुप देत दिखाई ।

घरानेदार गायकों का यह प्रसिद्ध ख्याल हवेली-संगीत का प्राचीन द्रुपद है । अष्टछाप के वाग्गेयकर 'नंददासजी' रचित इस पद को पुष्टिमार्गीय प्रणाली के अनुसार शयन-समय के दर्शन में राग केदार में ही गाने की प्रथा चालू है ।[‡] सम्प्रदाय का यह प्राचीन द्रुपद ख्याल बन जाने के बाद उनके शब्दों में कहीं-कहीं परिवर्तन सा उपर्युक्त पाठ में दिखाई देता है । संप्रदाय के संग्रहों में उनका संचारी आभोग सहित पाठ इस प्रकार प्राप्त होता है:–

स्थायी– बन ठन कहां जु चले ऐसी को मन भाई, सांवरे से कुंवर कन्हाई ।
अंतरा– मुख सोहे जैसे दूजको चंदा, छिप छिप देत दिखाई ।।१।।
स्थायी– चले ही जाओ नैंक ठाडे रहोगे, किन ऐसी सीख सिखाई ।
आभोग– "नंददास" प्रभु अब न बनेगी, निकस जायगी ठकुराई ।।२।।

(७)

क्रमिक पु. ३ में केदार राग में ही मध्यलय-त्रिताल का ख्याल जो प्रकाशित हुआ है, [θ] इनके मूल-गायक हैं अष्टछाप के सुप्रसिद्ध वाग्गेयकार परमानन्ददासजी । शब्दों के पाठ में कोई खास विभिन्नता नहीं होने से क्रमिक पुस्तक के पाठ को प्रस्तुत न कर सम्प्रदाय-प्रसिद्ध पाठ ही प्रस्तुत किया जा रहा है:–

स्थायी– बड़ी है कमलापति की ओट ।
अंतरा– सरन गये ते पकरि न पाये, कियो कृपा को कोट ।।१।।
संचारी– जाकी सभा एक रस बैठत, कौन बड़ो को छोट ।
आभोग– सुमिरत नाम अघै भव भंजन, कहा पंडित कहा बोट ।।२।।

---

[*] हिं० सं० प० भाग-३, पृष्ठ-

[‡] क्वचित् आजकल हमन राग में भी सुनने में आता है

[θ] हिं. सं. प. भाग–३, पष्ठ

स्थायी– **जद्यपि काल बली अति समरथ, नाहिंन ताको चोट ।**
अंतरा– **'परमानन्द' प्रभु पारस परसत, लोह कनक नहि खोट ॥३॥**

(८)

क्रमिक पु. ३ में राग-विहाग, ताल-त्रिताल का छोटा ख्याल का प्रथम छपा हुआ* पाठ देखिए:—

स्थायी– **तेरे सिर कुसुम बिथुर रह्यो भामनि, सोभा देत मानों नभ निसि तारे ।**
स्याम अलक छुटि रही री बदन पर, चांद छिप्यो मानों बादर कारे ॥

अंतरा– **मुक्तमाल मानो मान सरोवर , कुच चकवा चकवी दोऊ न्यारे ।**
'कुंभनदास' गोवरधनधारी, बस कीने नंदलाल पियारे ॥

ताल सुरफागता (सूलताल) में गाये जाने वाले इस ध्रुपद का सम्प्रदाय की सायं-सेवा में शयन के दर्शनान्तर के समय प्राय: शीतकाल में जब बादल होते हैं तब राग-विहाग में ही गान किया जाता है । ख्याल बन जाने पर चतुर्थ पंक्ति में कुछ पाठान्तर हो गया है । छाप में भी मतभेद दृष्टिगत होता है । कुंभनदासजी के अतिरिक्त नायक 'धौंधी' की यह रचना भी हवेली-संगीत में निम्न पाठ में प्रचलित है—

स्थायी– **तेरे सिर कुसुम बिखर रहे भामिनी, शोभा देत मानों नभ घन तारे ।**
अंतरा– **स्याम अलक छुटि रही बदन पर, चंद छिप्यौ मानों बादर कारे ॥१॥**
संचारी– **मोतिन माला मानों मानसरोवर, कुच चकवा दोऊ न्यारे न्यारे ।**
आभोग– **'धौंधी' के प्रभु तीन लोक बस कीने, ते बस कीने आली नंददुलारे ॥२॥**

(९)

क्रमिक-भाग-३ में राग-मालकौंस, ताल-एकताल का बड़ा ख्याल छपा हुआ है, जो आज कल विशेष प्रचार में है । इनका शब्द पाठ इस प्रकार है:—

*स्थायी–***पीर न जानी बलमा देखे तेहारी अनोखी रीत ।**
अन्तरा– **ऐसो निरमोही भइला बलमा, अजहुं न आये कहां की रीत ।**

छपा हुआ पाठ ही आज कल प्रचार में सुनने में आता है। 'तानसेन' की इस रचना का शुद्ध और पूर्ण पाठ प्राप्त न होने पर कर्णोपकर्ण द्वारा जो कुछ सुना होगा उनमें स्थायी के शब्द कुछ मिलते हैं, किन्तु अंतरे के पाठ में कुछ

---

* *हि. सं. प भाग–३–पृष्ठ*
शुद्ध पाठ 'कुंभनदास प्रभु गोवरधनधर'
'कुंभनदास 'कांकरोली प्रकाशन पृ. १०७

मिलते जुलते शब्द जोड़ दिए गए दिखाई देते हैं तथा ख्यालों में प्रायः संचारी-आभोग वर्ज्य ही होते हैं। सदारंग-अदारंग के समय में ही इस द्रुपद की ख्याल रचना होने की संभावना है।

उपर्युक्त बड़े ख्याल की बंदिश के शब्द हवेली संगीत परंपरा के निम्न लिखित द्रुपद से लिये गये हैं। संचारी-आभोग सहित इस पद को शीतकाल में राग-मालकौंस चौताल में गाने की प्रथा है। मंगला से श्रृंगार समय तक गाये जाने वाले 'खंडिता के पद राग-मालकौंस, के कीर्तनों में इनका समावेश किया हुआ है। 'तानसेन' की इस रचना का पाठ सम्प्रदाय के लिखित संग्रह में इस प्रकार प्राप्त हुआ हैः—

स्थायी– **पीर न जानी हो पिय, देखी तिहारी अनोखी प्रीत ।**
अंतरा– **हमसों अवधि बदी अनत बिलम रहे, कौन गाम की रीत ॥१॥**
संचारी– **तारे गिनत चार जुग बीते, कौन के भवन सिधारे मीत ।**
आभोग– **'तानसेन' के प्रभु अब न पत्याऊं तुम्हें करि राखौं रस रीत ॥२॥**

(१०)

क्रमिक पु. ४ में ललित राग, त्रिताल का विलंबित ख्याल का स्थायी-अंतरा का पाठ इस प्रकार छपा हुआ है*:—

स्थायी– **प्यारी तेरे नैन रागमगे, निस पिय सौंग जागे।**
अंतरा– **अरुन बरन सोभित आलस भरे, अति रति रती रस पागे॥**

पुष्टिमार्गीय कीर्तन-सेवा प्रणाली में माघशीर्ष १५ के पश्चात् पौष मास में प्रातः मंगला तथा श्रृंगार-समय राग ललित-मालकौंस में खंडिता के पद गाये जाते हैं। द्रुपद-धमार अंग के पद को उपर्युक्त बड़ा-ख्याल की बंदिश में प्रकाशित किया गया है। अष्टछाप के वाग्गेयकार श्री 'कृष्णदास' जी-रचित यह कीर्तन सम्प्रदाय में ललित राग में ही गाया जाता है। प्राचीन संग्रहों में इसका संचारी आभोग सहित पाठ इस प्रकार प्राप्त होता हैः—

स्थायी– **प्यारी तेरे नैन रंगमगे निस पिय संग जागे ।**
अंतरा– **अरुन बरन सोभित आलस भरे, रति रस रंग पागे ॥१॥**
संचारी– **पलक पीक मोंह रमि रही अली, मानों कमल परागे ।**
आभोग– **'कृष्णदास' प्रभु गिरिधर पिय संग, हरि रहसि मुख लागे ॥२॥**

(११)

राग-ललित-त्रिताल का बड़ा-ख्याल क्रमिक पु.-४ के अनुसार निम्न प्रकार है‡:-

स्थायी– **उनींदे कान्ह आये मेरे नैन भरे रसमाते ।**
अंतरा– **डगमग पांई धरत धरनी पर, बेनू बोलत अरुझाते ।**

** हिं. सं. प. पृष्ठ–४९९ (प्रति सन् १९३९)*
‡ हिं. सं. प. पृष्ठ '१०१ (प्रति सन् १९३९)

उपर्युक्त पाठ ठीक है, केवल अन्तरा में बेनू के स्थान पर बेन शब्द चाहिए, यह भी सम्प्रदाय के ललित राग की खंडिता का पद है जो कि पौष मास में गाया जाता है। लिखित संग्रह में इसका संपूर्ण पाठ इस प्रकार है:—

स्थायी– **उनींदे कान्ह आयेरी मेरे नैन भरे रसमाते ।**
अंतरा– **डगमग पांइ धरत धरनी पर, बैंन बोलत अरुझाते ।।१।।**

संचारी– **सब अंग सिथिल श्रम-जल भीने, वारंवार जृंमाते ।**
आभोग– **काजर रेख रही अधरन पर, काहे कों स्याम लजाते ।।२।।**

संचारी २–**बिनगुन माल बिराजत उर पर, नखक्षत नांहि छिपाते ।**
आभोग २–**'सूरदास' प्रभु सांचि कहों तुम, कौन त्रिया रंगराते ।।३।।**

(१२)

ललित राग का भावमय पद का स्थायी-अंतरा क्रमिक पुस्तक–४ में विलंबित-त्रिताल का बड़ा ख्याल होकर निम्न शब्दों में छपा हुआ है:—

स्थायी– **भोरेहि आये मेरे द्वारे जोगीआ के अलक कहे कर जगाये ।**
अंतरा– **मोहनि मूरत अलबेली सी नैना रसीले अनुरागे ।**

यह चीज भी हवेली-संगीत का प्राचीन पद है, नायक 'धौंधी' रचित इस कीर्तन का शीत-ऋतु की ललित-मालकौंस के 'खंडिता' के पदों में समावेश किया गया है तथापि 'जोगिया' 'अंग भभूत' 'बरोगे' आदि शब्दों का भाव 'हरि कियो हर भेख' की भावना की ओर ले जाता है। खंडिता के अन्य पदों में इस प्रकार का भाव इस कीर्तन में ही प्राप्त होता है, जिसका सम्पूर्ण पाठ सम्प्रदाय के संग्रहों में से निम्न प्रकार* प्राप्त हुआ है:—

स्थायी– **भोरही आये मेरे पाछें जोगिया अलख कहि कहि जागे ।**
अंतरा– **मोहिनी मूरति अैंन मैंन सी, नैंन भरे अनुरागे ।।१।।**

संचारी– **अंग भभूत भरे गरें सेली, दरसत ही बैरागे ।**
आभोग– **तन मन वारोंगी 'धोंधी' के प्रभु को राखोंगी एक सुहागे ।।२।।**

(१३)

क्रमिक भाग–4 पृष्ठ–739 पर राग-मुलतानी, त्रिताल का छोटा ख्याल स्थायी और दो अन्तरे में निम्नलिखित शब्दों में छपा हुआ है:—

---

* सं. कीर्तन पद्धति पृ १०८

स्थायी– **करि गोपाल की सब होये, गोपाल की सब होये ।**
अंतरा– **जो रच राखी नौंदनंदननें, मेट सके नहिं कोये ।।**
अंतरा–२ **जौंत्र मौंत्र टोना यह उदम सब अत झूठे सब जोये ।।**

यह चीज भी पुष्टिमार्ग के अष्टछापी परमानंददासजी-रचित पद है। 'सूर' के भी कई पद लोग मनमाने राग में गाते हैं। हवेली-संगीत की प्राचीन प्रथा में सायं-सेवा की समाप्ति में जो आश्रय के पद गाये जाते हैं, उनमें इस पद का समावेश है। यह बिहाग राग में गाया जाता है। सम्प्रदाय के संग्रहों में इस पद का बिहाग राग में छपा हुआ पाठ प्राप्त होता है, जो इस प्रकार है:—

स्थायी– **कियो गोपाल को सब होय ।***
अंतरा– **जो जानें पुरुसारथ अपनो, अतिसै झूठो सोय ।।१।।**
संचारी– **दुख सुख लाभ अलाभ सहज गति, नाहिन मरिये रोय ।।**
अंतरा–२ **जो कुछ लेख लिख्यो नंदनंदन, मेटि सके नहिं कोय ।।२।।**
संचारी–२ **जंत्र मंत्र साधन उद्यम बल, ये सब डारों धोय ।**
आभोग– **'परमानंददास' को ठाकुर, चरन कमल चित पोय ।।३।।**

(१४)

क्रमिक भाग-5 दुर्गा राग में ताल-त्रिताल के विलंबित (बड़ा) ख्याल का पाठ निम्न प्रकार प्रकाशित हुआ है:—

स्थायी– **अहो जिन बोलो पिया मोसों तुम आजे ।**
अंतरा– **जहां बसे निस वहां सिधारो, काहे हमसों आजे ।।**

उक्त ख्याल वास्तव में हवेली संगीत का पद है। यह अष्टछाप के वाग्गेयकार श्री 'छीतस्वामी' की रचना है। बिलावल राग की खंडिता का यह कीर्तन प्रातः मंगला या श्रृंगार के समय गाने की प्रथा है। संचारी आभोग सहित ठीक पाठ इस प्रकार है—

स्थायी– **(अहो) जिन बोलो पिय मोसों आज ।**
अंतरा– **जहां बसे निस ताहिकें सिधारो (लाल) हमसों‡ कहा है काज ।।१।।**
संचारी– **सगरी रैन मोहि मग जोवत गई, दही मदन की दाज ।**
आभोग– **'छीतस्वामी' गिरिधर दृग जोरत, आवत नाहिन लाज ।।२।।**

---

* *पाठान्तर–कियो सब गोपाल ही को होइ*

‡ *पाठान्तर–मोतें*

(१५)

क्रमिक पु. ५,* राग-ललित-पंचम का त्रिताल में प्रकाशित बड़ा-ख्याल का पाठ भी देखिए:—

स्थायी– **आलस उनीदें नैन लाल तिहारे, कहां तुम रैन बिताये ।**
अंतरा– **पीक कपोलन देखियत है, अधरन अंजन लखाये ।।**

पुष्टिमार्गीय प्रणाली में शीतकाल में गाये जाने वाले 'ललित मालकौंस' की खंडिता का यह द्रुपद अंग का 'राग-ललित' का पद गायकों के घराने में 'ललित-पंचम' का बड़ा ख्याल बन चुका है। वास्तव में यह अष्टछाप के श्री 'नंददास जी' का गाया हुआ प्राचीन कीर्तन है, जिसका संपूर्ण पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी– आलस उनींदे नैन लाल तिहारे, कहां तुम रैन बसाये ।
अंतरा– पीक कपोलन देखियत है (पिय) अधरन अंजन लखाये ।।१।।

संचारी– जावक भाल लग्यो पिय छतियां, नखक्षत चिन्ह दिखाये ।
आभोग– 'नंददास' प्रभु बोलत भले, भोर भये उठि आये ।।२।।

(१६)

भातखंडे क्रमिक पु. ५‡ में राग-ललित-पंचम का छोटा ख्याल प्रसिद्ध हुआ है, उसका शब्द-पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी– **कहो तुम सांचि कहां तें जु आये, भोर भये नंदलाला ।**

अंतरा– **पीक कपोलन लाग रही है, घूमत नैन विशाला ।**

इस ख्याल के स्थायी-अंतरा हवेली-संगीत के पद से ही लिये गये हैं। शीतकाल में ललित राग में गाया जाने वाला अष्टछाप के 'कृष्णदास'-रचित खंडिता का यह कीर्तन मंगला-समय का है। सम्प्रदाय के संग्रहों में इनका सम्पूर्ण पाठ निम्न प्रकार प्राप्त होता है :—

स्थायी– **कहो तुम सांची कहां ते आये, भोर भये नंदलाल ।**
अंतरा– **पीक कपोलन लागि रही है, घूमत नैन बिसाल ।।१।।**

संचारी– **लटपटी पाग अटपटे भूखन,θ उरसि मरगजी माल ।**
आभोग– **'कृष्णदास' प्रभु रसबस करि लीने, धन धन ब्रज की† बाल ।।२।।**

** हिं. सं प. भाग–१ हिन्दी आवृत्ति १९६३ पृष्ठ–३६७*

‡ हिं. सं. प. भाग–१ पृष्ठ ६३ हिन्दी प्रकाशन १९६३ ।

पाठान्तःर θ पेचन † यह ब्रजबाल

(१७)

क्रमिक पु. ५ में छपा हुआ राग-जेतश्री, झूमरा ताल का बड़ा-ख्याल भी पुष्टि सम्प्रदाय के द्रुपद के स्थायी अन्तरा ही है। इसका पाठ इस प्रकार दिया गया है:—

स्थायी– **हालरियां माई हलराऊं हुलराऊं ।**
अंतरा– **अगर चंदन को पलना बनाऊं, हीरा मोतियन लालरियां ।।**

उपर्युक्त अनुसार यह ख्याल की रचना बन चुकी है, यह असल में हवेली-संगीत का राग-टोडी-चौताल का द्रुपद है। सम्प्रदाय में 'श्रीजी' को जब चंदन (सूखड) के पलना में झुलाया जाता है तब यह कीर्तन (पद) विशेष रूप से गाया जाता है। इसका सम्पूर्ण पाठ इस प्रकार है:—

स्थायी– **अरी० मेरी माई लराऊँ हुलराउं हालरियां ।**
अंतरा– **अगर चंदन को पलना घड़ायो, बीच बीच हीरा मोती लालरियां ।।***
संचारी– **सखी‡ सहेली मंगल गावहुं, बांधो बंदन-मालरियां**
आभोग– **कृष्ण जीवन लछीराम के प्रभु**θ **(माई) वारौंगी मोतिन मालरियां ।।**

द्रुपद के स्थायी अंतरा को ख्याल के स्थायी-अन्तरा बनाने में बंदिश की दृष्टि से कहीं-कहीं शब्दों को आगे-पीछे या कम-ज्यादा करके या कोई मिलता जुलता शब्द लगा दिया गया है। उक्त द्रुपद की स्थायी में से 'अरी मेरी' शब्द तथा अंतरे में 'बीच-बीच' शब्द कम कर दिये हैं और अंतरा में 'घडायो' के स्थान पर 'बनाऊं' शब्द लगाकर बंदिशकार ने इच्छित राग (जेतश्री) ताल (झूमरा) में विलंबित ख्याल की रचना की है।

(१८)

पं. वि. ना. पटवर्धनजी के राग-विज्ञान, भाग-१ राम छायानट, ताल-झूमरा (बड़ा-ख्याल) की चीज का पाठ भी निम्नलिखितानुसार है–

*स्थायी–***प्रगट भई शोभा त्रिभुवन की भानु गोप के आई ।**
*अंतरा–***अद्‌भुत रूप देखि ब्रज-वनिता रीझी लेत बलाई ।।**

यह श्री राधाजी की जन्म-बधाई का प्राचीन पद है, राधाष्टमी के अवसर पर हवेली संगीत प्रणाली में धमार ताल में राग सारंग या कान्हरा में गाने की

---

*० माई हुलराऊं जुलराऊं हालरियां   * झालरियां*
‡ सखी लहेली बन-बन आई, मालिन लाई डालरियाँ ।।
θ प्रभु पर वारि डारूं मोतिन लालरियाँ ।।२।।

प्रथा आज भी चालू है, जिनका गायकों में उपर्युक्त पाठानुसार ख्याल की बंदिश में प्रचार हो रहा है । यह अष्टछाप के ‘सूर’’ की रचना है, सम्प्रदाय के संग्रहों में इसका पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी–**प्रगट भई सोभा त्रिभुवन की श्रीवृषभान गोप के आई ।**
अंतरा–**अद्‌भुत रूप देखि ब्रज-वनिता, रीझि-रीझि के लेत बलाई ।।१।।**
संचारी–**र्नाहं कमला र्नाहं सची रति रंभा, उपमा उर न समाई ।**
आभोग–**जातें प्रगट भये ब्रज-भूषन, धन्य पिता धन्य माई ।।२।।**
सं.२–**जुग-जुग राज करो दोऊ जन, इत तुम उत नंदराई ।**
आ.२–**उनके मदनमोहन इत राधा, “सूरदास” बलिजाई ।।२।।**

(१९)

पं. पटवर्धनजी के “राग-विज्ञान, द्वितीय-भाग” में* राग पूर्वा एकताल का बड़ा ख्याल निम्न शब्द-पाठ में छपा हुआ है:–

स्थायी–**बसे मेरे नयनन में दोउ चन्द**
गौर वर्ण वृषभानु-नन्दनी, शाम वरण नंदनन्द ।
अंतरा–**गोलक रहे लुभाय रूप में, निरखत आनंद कन्द ।।**

ख्याल-गायन में संचारी-आभोग की अनावश्यकता के कारण बंदिशकारों की इस तरफ उपेक्षा-वृत्ति होना संभव है । अतः उन्हें कृष्णलीला की अप्रचलित और भाव-पूर्ण दो पंक्तियाँ प्राप्त होने पर इच्छित राग में वे ख्याल के स्थायी-अन्तरा की बंदिश में लगा देते थे । उपर्युक्त प्रकाशित पाठ की स्थायी के शब्दों में विशेष भिन्नता नहीं है । अन्तरे का पूर्व भाग भिन्न है । वास्तव में यह “हवेली-संगीत” का पद है। “श्रीजी” को जब “सेहरा” का शृंगार होता है तब इसे सायं-सेवा के (द्वितीय दर्शन) भोग-समय में राग “नट” में गाने की प्रथा है । यह सम्प्रदाय के मध्यकालीन वाग्गेयकार “श्री हरिराय प्रभु” की रचना है । सम्प्रदाय के संग्रहों में पाठ निम्न प्रकार प्राप्त होता है:–

स्थायी–**बसो मेरे नैनन में दोउ चंद ।।**
अंतरा–**कनक बरन वृषभान नंदिनी, स्याम बरन नंद-नंद ।।१।।**

(२०)

राग-विज्ञान, भाग-२ में राग-दुर्गा, ताल-तिलवाडा*θ* का विलंबित ख्याल का छपा हुआ पाठ देखिए:–

---

* *पृष्ठ-२ (ई. स. १९३७ प्रकाशन)*
θ पृष्ठ-१२२ (ई.स. १९३७ प्रकाशन)

स्थायी–सुनि धून मुरली बैन बाजे हरी रास रचो ।
अतरा–हरिदास के स्वामी स्यामा कुंजबिहारी, नीके ही आज गोपाल नचो ।।

उपर्युक्त ख्याल भी पुष्टिमार्गीय कीर्तन प्रणाली का प्राचीन द्रुपद है । शरदोत्सव के दिन यह पद राग-केदार में गाया जाता है । स्वामी "हरिदासजी" रचित इस द्रुपद की स्थायी और आभोग को दुर्गा राग की बंदिश में स्थायी और अन्तरा कर दिया गया है । इसका ठीक पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी–सुन धुनि मुरली बन बाजै, हरि रास रच्यो ।
अंतरा–कुंज-कुंज द्रुमबेलि प्रफुल्लित, मंडल कंचन मनिन खच्यो ।।१।।
संचारी–निर्तत जुगल* किसोर जुवतिन संग, दोउ मिलि राग केदारो सच्यो ।
आभोग–'हरिदास' के स्वामी स्यामा कुंजबिहारी, नीके आजु गोपाल नच्यो ।।२।।

(२१)

राग-विज्ञान भाग-३ में राग गुर्जरी टोडी, त्रिताल का मध्यलय ख्याल, जो पुष्टि-मार्ग का सूरदास-रचित "पलना का" पद है, आठ पंक्ति का संपूर्ण पाठ छपा हुआ है । इसमें कोई विशेष भिन्नता न होने पर भी कहीं-कहीं पाठ भेद है । प्रथम राग-विज्ञान में छपा हुआ पाठ देखिए:–

स्थायी–यशोदा हरि पालने झुलावै, हलरावै दुलरावै जोई सोई कछु गावै ।
अंतरा–मेरे लाल को आऊ निंदरिया काहे न आनि सुआवै ।
तू काहै न बेगि सों आवै तोको कान्ह बुलावै ।।१।।
कबहूं पलक हरि मूंद लेत है कबहूं अधर फरकावै ।।
सोवत जानि मौन है है हरि करि करि सैन बुलावै ।।२।।
इहि अंतर अनुलाई उठे हरि, जसुमति मधुरे गावै ।।
जो सुख सूर अमर मुनि दुर्लभ सो नन्द-भामिनी पावै ।।३।।

हवेली-संगीत में उपर्युक्त पद, जो ख्याल बन चुका है, राग बिलावल, ताल-धमार में पलना-दर्शन-समय गाने की परंपरा आज तक है । संग्रहों में भी राग-बिलावल ही लिखा हुआ है । शुद्ध पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी–जसोदा हरि पालने झुलावै ।
अंतरा–हुलरावै हुलराइ मल्हावै, जोई सोई कछु गावै ।।१।।
स्थायी–मेरे लाल को आउ निंदरियां, काहै न आई सुवावै ।
आभोग–तू काहे न बेगि ही आवत, तोकों कान्ह बुलावै ।।२।।

पाठान्तर : * नवल किसोर

कबहुं पलक हरि मूंदि लेत हैं, कबहुं अधर फरकावैं ।।
सोवत जानि मौन व्हैके रहे, करि करि सैंन बतावैं ।।३।।
इहि अंतर अकुलाइ उठे हरि, जसुमति मधुर हुलावैं ।।
जो सुख "सूर" अमर मुनि दुर्लभ, सो नित जसुमति पावैं ।।४।।

(२२)

राग-विज्ञान, भाग-३ में राग-ललित, तीन ताल (मध्यलय) का ख्याल भी निम्न प्रकार से प्रकाशित हुआ है:—

स्थायी–**जागो हो मोरे जगत उजियारे,**
कोटि मदन मुसकनि पर वारत कमलनयन के तारे ।
अंतरा–**ग्वाल बच्छ सबरे संग लै के, यमुना तीर पर जाउ सवारे ।।**

राग-ललित में प्रकाशित उपर्युक्त ख्याल हवेली-संगीत का प्राचीन-परंपरागत राग-भैरव का पद है जो कि आज भी "श्रीजी" को जगाने के समय सुनाई पड़ता है। शुद्ध पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी– — — — — **जगत उजियारे ।**
अंतरा–**कोटि मदन वारौं मुसकनि पर, कमल नैन अखियन के तारे ।**
संचारी–**सुरभी-बच्छ ग्वालन संग लैकें, जमुना के तीर जाउ मेरे प्यारे ।।**
आभोग– — — — — **दूर जिनि जाओ मेरे ब्रज रखवारे ।**

(२३)

संगीताचार्य "श्री राजा भैया पूछवाले" की संगीतोपासना पुस्तक में पृष्ठ-४२ पर छपा हुआ "राग-बिहागड़ा, ताल-आड़ा चौताल" का विलंबित ख्याल का शब्द पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी–**प्यारी पग हूं जैसी पग हूं की पायल बाजैं ए मान ।**
अंतरा–**जागैं सब ब्रिज के लोग ओर जागैं अरे हटेली, नेक कहिए मान।**

उपर्युक्त बड़ा-ख्याल, जो ग्वालियर घराने की चीज बनने पर गायकों में प्रसिद्ध हो चुका है, इस चीज को हमने आगरा घराने के श्रेष्ठ गायक श्री फैयाजखांजी से भी बिहागडा राग में सुना है, किन्तु उनके स्थायी के शब्द थे "प्यारी पग हौलें हौलें धर, जैसे तेरे पायल बाजैं ए मान"। वास्तव में यह चीज पुष्टिमार्गीय कीर्तन परंपरा का पद है। यह शयन के दर्शनान्तर गाये जाने वाले 'मान के पद' संग्रह का पद है। अष्टछाप के कविवर श्री नंददासजी की इस रचना को आज भी विशेषत: "बिहागडा" राग में ही गाने की प्रथा है, सम्पूर्ण पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी– **प्यारी पग० हौलें हौलें धर, जैसे तेरे नुपूर न बाजै ।।ध्रु।।**
अंतरा– **जागै* जो ब्रज को लोग नाहिन सुनाये जोग,**
हाहारी हठीली नेक‡ मेरो कह्यो कर ।
संचारी– **जौंलों ब्रज बीथन माँहि सघन कुंज की परछाँहि,**
तौंलों मुख ढाँप चलि कुंवरि रसिक वर ।
आभोग– **नंददास प्रभु प्यारी छिनहू न होउ न्यारी,**
सरद उजियारी जामें जैहों कहुं रर ।।२।।

(२४)

पुष्टि-सम्प्रदाय की कीर्तन प्रणाली का निम्न पद भी गायकों के घरानों का बड़ा-ख्याल बन चुका है । इसे श्री जयसुखलाल शाह ने अपने "कानडा के प्रकार" नामक पुस्तक में पृष्ठ-२५० पर राग "रायसा कानडा" में प्रसिद्ध किया है । विलंबित त्रिताल में निबद्ध किये हुए इस ख्याल के स्थायी अंतरा का पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी– **री तुम समझ समझ नाहीं कछु,**
उठ चल पिया पास पहेर गहेनो ।
अंतरा– **कबकी मैं ठाड़ी नेहोरो करत हूँ,**
एरी मेरी प्यारी तोहैं नाहीं लीनो ।

उपर्युक्त चीज वास्तव में पुष्टिमार्गीय कीर्तन परंपरा का पद है। तानसेन की रचना है । शयन के दर्शन में 'राग नायकी" में यह गाया जाता है । नित्य-पद के संग्रहों में भी राग नायकी के अंतर्गत पदों में ही सुप्रसिद्ध है । किन्तु ख्याल बंदिश बनाने वालों ने राग और शब्द-पाठ भी कुछ भिन्न कर दिये हैं । सम्प्रदाय के संग्रहों में इनका शब्द-पाठ इस प्रकार है:–

स्थायी– **अरी तोमें समुझ नाहिंन उठि चल री**
प्रियेθ पहरि गहेनों ।
अंतरा– **कबकी मैं ठाडी मनावत तोकौं,**
चलरी सखी तोहि नाहिन रहेनों ।।१।।

पाठान्तर : ० हरें हरें
‡ जागत ब्रज के लोग नाहिं सुनायवे जोग
* भोरी

पाठान्तर : θ पिय में